अप्रैल
2025

धर्म एवं अध्यात्म के तत्त्वज्ञान का वैज्ञानिक विश्लेषण

अखण्ड ज्योति

वर्ष 89 | अंक – 4 | प्रति – ₹ 25 | ₹ 300 वार्षिक

10 भावुकता से भावना की यात्रा
24 कर्मों की अभिव्यक्ति है भाग्य
30 बाहर नहीं, भीतर है संतोष
38 स्थायी सफलता का राजमार्ग

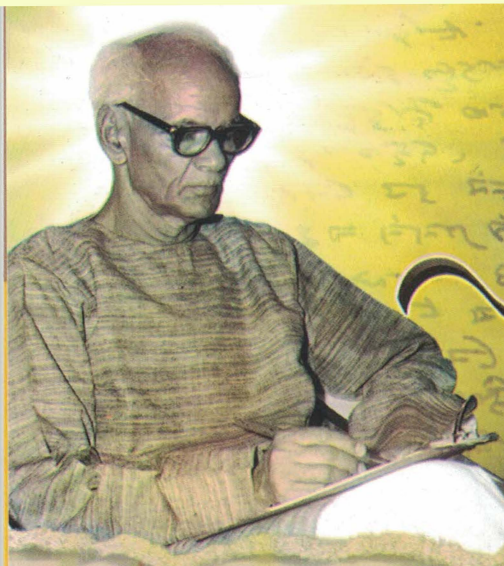

75 वर्ष पूर्व अखण्ड ज्योति

मरने से डरना क्या

जिसे जीवन का वास्तविक स्वरूप मालूम हो गया है, उसे न अपनी मृत्यु में कोई दुःख की बात प्रतीत होती है और न दूसरों की मृत्यु का कष्ट होता है। किसी विशाल नगर के प्रमुख चौराहे पर खड़ा हुआ व्यक्ति देखता है कि प्रतिक्षण असंख्यों व्यक्ति अपने कार्यक्रम के अनुसार इधर- से- उधर आते-जाते हैं। वह स्वयं भी कहीं से आया है और कहीं जा रहा है, केवल कुछ क्षण के लिए चौराहे का कुतूहल देख रहा है। इस अपने या दूसरों के आवागमन पर यदि वह व्यक्ति दुःख माने या विलाप करे तो उसे अविवेकी ही कहा जाएगा। संसार के विशाल चौराहे पर भी ऐसे ही आवागमन की भीड़ लग रही है। एक की मृत्यु ही दूसरे का जन्म है, एक का जन्म दूसरे की मृत्यु है। एक का सुख दूसरे का दुःख है और दूसरे का दुःख, एक का हर्ष। यह आँख–मिचौनी,यह भूल-भुलैया, विवेकवानों के लिए एक चित्ताकर्षक विनोदमयी क्रीड़ा है, पर बाल-बुद्धि के व्यक्ति इसमें उलझ जाते हैं और इस कुतूहल को कोई महान आपत्ति मानकर सिर धुनते, रोते-बिलबिलाते और पश्चात्ताप करते हैं।

मृत्यु के दुःख में शरीरों का नष्ट होना कारण नहीं,वरन जीवन के वास्तविक स्वरूप की जानकारी होना ही कारण है। ऐसे कितने ही बलिदानी वीर हुए हैं, जो फाँसी की कोठरी में रहते हुए दिन-दिन अधिक मोटे होते गए, वजन बढ़ता गया और फाँसी के फंदे को अपने हाथ गले से लगाया और खुशी के गीत गाते हुए मृत्यु के तख्ते पर झूल गए। कवि 'गंग' को जब मृत्युदंड दिया गया और उन्हें पैरों तले कुचल डालने को खूनी हाथी छोड़ा गया तो वे प्रसन्नता से फूल उठे, उन्होंने कल्पना की कि देवताओं की सभा में कोई छंद बनाने वाले की आवश्यकता हुई है, इसलिए भक्त कवि गंग को लेने के लिए हाथीरूपी गणेश आए हैं। कितने ही महात्मा समाधि लेकर अपना शरीर त्याग देते हैं। उन्हें मरने में कोई अनोखी बात दिखाई नहीं पड़ती।

अप्रैल–1950(पृष्ठ 4)

संस्थापक-संरक्षक
वेदमूर्ति तपोनिष्ठ
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य
एवं
शक्तिस्वरूपा
माता भगवती देवी शर्मा
संपादक
डॉ० प्रणव पण्ड्या
कार्यालय
बिरला मंदिर के सामने मथुरा-वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा (281003)
दूरभाष नं० (0565) 2403940, 2972449
2412272, 2412273
मोबाइल नं० 9927086291, 7534812036
7534812037, 7534812038, 7534812039
समय—प्रातः 10 से सायं 6 तक
कृपया इन मोबाइल नंबरों पर एस. एम. एस. न करें।
नया ई-मेल :
akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

वर्ष	:	89
अंक	:	04
अप्रैल	:	2025
चैत्र-वैशाख	:	2082
प्रकाशन तिथि	:	01.03.2025

वार्षिक चंदा

भारत में सामान्य डाक से	:	300/-
भारत में रजिस्टर्ड डाक से	:	540/-
विदेश में	:	2800/-

आजीवन (बीसवर्षीय)

भारत में सामान्य डाक से	:	6000/-
भारत में रजिस्टर्ड डाक से (वार्षिक)	:	+240/-

क्रमश : गायत्री-साधना का महायज्ञ

गायत्री-साधना सिद्ध हो चुकी थी। महापुरश्चरण पूर्ण हो चुके थे। अब साधना की पूर्णाहुति के रूप में '**सहस्र कुंडीय महायज्ञ**' होना निश्चित हुआ। इस महायज्ञ के दृश्य आयाम के साथ अदृश्य आयाम भी थे। अपने दृश्य स्वरूप में यह सिद्धों, साधकों एवं श्रद्धालुजनों का महामेला था। यह ऐसा महामेला था, जैसा कि मथुरा-वृंदावन निवासियों ने पहले कभी न देखा था। इसमें सिद्धों-साधकों एवं श्रद्धालुजनों की आध्यात्मिक चेतना की त्रिवेणी आपस में हिल-मिलकर एक होती हुई अपनी पवित्रता से सबको पवित्र कर रही थी।

इसमें साधकों की गंगा धारा और श्रद्धालुओं की यमुना धारा तो सभी के लिए दृश्य थी; पर सिद्धों की सरस्वती धारा सामान्य दृष्टि के लिए अदृश्य थी। युगऋषि परमपूज्य गुरुदेव ने अपने निकटस्थ जनों को यह बता रखा था कि इस महायज्ञ में हिमालय के पुरातन ऋषि एवं वर्तमान सिद्ध तपस्वी भी आएँगे। इनमें से कुछ दिखाई देंगे, कुछ नहीं दिखाई देंगे। जो दिखाई देंगे, वे सभी सामान्य जनों से अलग होंगे। उनसे कोई प्रश्न न पूछा जाए। यदि वे भोजन करें, तो उनकी पत्तलों की जूठन कहीं इधर-उधर न फेंककर सीधे उन तक पहुँचाई जाए। जिन लोगों को ये बातें कही गई थीं, उनमें से बांदा (उ.प्र.) के बद्री प्रसाद पहाड़िया भी थे।

वर्ष 1958 ई० में सूर्य की ऊर्जा का संदोहन करने वाला यह सहस्रांशु महायज्ञ अनेकों चमत्कारी अनुभवों के साथ संपन्न हुआ। इस यज्ञ में आहुति डालने वालों के लिए चांद्रायण-साधना के साथ सवालक्ष गायत्री जप अनिवार्य था। पहाड़िया जी ने बाद में बताया कि इस महायज्ञ में गौर वर्ण के दीर्घकाय जटा-जूटधारी कुछ सिद्ध लोगों के दर्शन हुए। इनमें से कुछ ने भोजन किया। उनकी जूठन को बाद में गुरुदेव को सौंपा गया, जो समस्त भोजन सामग्री में मिलकर ऋषि प्रसाद बनी। ❐

विषय सूची

- आवरण—1 1
- आवरण—2 2
- गायत्री-साधना का महायज्ञ 3
- **विशिष्ट सामयिक चिंतन**
  स्वावलंबी भारत की दिशा में गायत्री परिवार 5
- जीवन आनंद की यात्रा है 9
- भावुकता से भावना की यात्रा 10
- **पर्व विशेष—नवसंवत्सर**
  नवसंवत्सर में लक्ष्य सिद्ध करें 12
- भारतवर्ष में वंश-परंपरा 15
- प्रसन्नता प्रदाता भारतीय संगीत 18
- ईश्वर समर्पण 20
- आत्मशक्ति के पर्याय भगवान हनुमान 22
- कर्मों की अभिव्यक्ति है भाग्य 24
- जीवन की परिभाषा है माँ 26
- मन को मौन करने का विधान 28
- बाहर नहीं, भीतर है संतोष 30
- महान विद्वान सुब्रह्मण्यम भारती 32
- **पूज्य गुरुदेव जैसा मैंने देखा-समझा—31**
  अध्यात्म और विज्ञान का समन्वय 34
- स्थायी सफलता का राजमार्ग 38
- पक्षियों की विचित्र दुनिया 40
- **ब्रह्मवर्चस-देव संस्कृति शोध सार—192**
  विज्ञान पत्रकारिता पर शोध 43
- **युगगीता—299**
  आत्मा को अकर्त्ता बनाने का सिद्धांत 46
- **विश्वविद्यालय परिसर से—238**
  ऐतिहासिक शुभारंभों का केंद्र बना विश्वविद्यालय 48
- **परमवंदनीया माताजी की अमृतवाणी**
  जीवन के देवता को, आओ तनिक सँवारें (पूर्वार्द्ध) 52
- **साधना शताब्दी-विशिष्ट लेखमाला**
  जीवन की वापसी के लिए अंतरिक्ष का प्रकाश 60
- **अपनों से अपनी बात**
  विचारक्रांति का अनिवार्य आध्यात्मिक अनुबंध—उपासना 63
- युगऋषि विश्वामित्र (कविता) 66
- आवरण—3 67
- आवरण—4 68

आवरण पृष्ठ परिचय

श्रीराम राममंदिर के समक्ष

अप्रैल-मई, 2025 के पर्व-त्योहार

रविवार	06 अप्रैल	श्रीराम नवमी	रविवार	04 मई	गंगोत्पत्ति
मंगलवार	08 अप्रैल	कामदा एकादशी	सोमवार	05 मई	जानकी नवमी
गुरुवार	10 अप्रैल	महावीर स्वामी जयंती	गुरुवार	08 मई	मोहिनी एकादशी
शनिवार	12 अप्रैल	हनुमान जयंती	शनिवार	10 मई	नृसिंह जयंती
रविवार	13 अप्रैल	वैशाखी	सोमवार	12 मई	बुद्ध पूर्णिमा
सोमवार	14 अप्रैल	आंबेडकर जयंती	शुक्रवार	23 मई	अपरा एकादशी
गुरुवार	24 अप्रैल	वरूथिनी एकादशी	मंगलवार	27 मई	वट सावित्री व्रत
मंगलवार	29 अप्रैल	परशुराम जयंती	गुरुवार	29 मई	महाराणा प्रताप जयंती
बुधवार	30 अप्रैल	अक्षय तृतीया			

★ **यह पत्रिका आप स्वयं पढ़ें तथा औरों को पढ़ाएँ। कुछ समय के बाद किसी अन्य पात्र को दे दें, ताकि ज्ञान का आलोक जन-जन तक फैलता रहे। —*संपादक***

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

विशिष्ट सामयिक चिंतन

स्वावलंबी भारत की दिशा में गायत्री परिवार

मनुष्य में देवत्व का उदय और धरती पर स्वर्ग का अवतरण, परमपूज्य गुरुदेव द्वारा प्रवर्तित युग निर्माण आंदोलन का मुख्य उद्देश्य रहा है, जो व्यक्ति निर्माण, परिवार निर्माण एवं समाज निर्माण के क्रमिक चरणों को पार करते हुए राष्ट्र, विश्व एवं युग निर्माण तक पहुँचता है।

परमपूज्य गुरुदेव ने अज्ञान, अभाव और अशक्ति को युग के तीन महादैत्यों की संज्ञा दी तथा इनके उपचारार्थ बौद्धिक क्रांति, नैतिक क्रांति एवं सामाजिक क्रांति का आवाह्न किया। इसके अंतर्गत जनमानस के विचारों में परिवर्तन एवं भावनात्मक नवनिर्माण के लिए प्रचारात्मक अभियान की बात कही, जो गायत्री, यज्ञ एवं युगसाहित्य के माध्यम से घर-घर तक पहुँच रहा है और सभी गायत्री शक्तिपीठें, प्रज्ञापीठें एवं गायत्री चेतना केंद्र इस कार्य को अपने-अपने स्तर पर बखूबी अंजाम दे रहे हैं।

इसका अगला चरण रचनात्मक आंदोलनों के रूप में सृजनात्मक अभियान का है, जो अपने अंतिम चरण में अनाचार-अनीति से जूझते हुए संघर्षात्मक अभियान के रूप में देवासुर संग्राम का निर्णायक कदम होगा। रचनात्मक आंदोलन को पूज्य गुरुदेव ने युग निर्माण के सप्त आंदोलन के रूप में परिभाषित किया जो (1) साधना, (2) स्वास्थ्य, (3) शिक्षा, (4) स्वावलंबन, (5) पर्यावरण, (5) नारी जागरण, (7) व्यसनमुक्ति और कुरीति उन्मूलन के रूप में पूरा होता है, जिसमें साधना को धुरी माना गया और शेष इसके इर्द-गिर्द केंद्रित हैं।

हर गायत्री शक्तिपीठों व केंद्रों से आशा की जाती है कि वे कम-से-कम किसी एक रचनात्मक आंदोलन को चलाएँगे और क्रमिक रूप में स्थानीय परिस्थितियों व आवश्यकताओं के अनुरूप शेष आंदोलनों को गति देंगे। इन्हीं के आधार पर प्रज्ञा अभियान के प्रयासों की सफलता का आकलन होना है। इनमें स्वावलंबन आंदोलन आत्मनिर्भरता के महान उद्देश्य को लेकर पूज्य गुरुदेव द्वारा परिकल्पित एक दूरदर्शी प्रयोजन है।

देश में रोजगार की स्थिति से सभी परिचित हैं। सभी को सरकारी नौकरियों के पीछे भागते देखा जा सकता है, जो बहुत सीमित हैं। आश्चर्य नहीं कि अपने गाँव व कस्बों को छोड़कर युवाओं को नौकरी की तलाश में बड़े शहरों में भटकते देखा जा सकता है। जबकि गाँव में रोजगार के तमाम संसाधन उपलब्ध हैं। युवा थोड़ा श्रम की गरिमा से परिचित हों, थोड़ा स्वाभिमान का भाव हो, अपनी मातृभूमि से प्यार हो और सादा जीवन उच्च विचार की मानसिकता हो तो गाँव से बेहतर निवास करने व जीवनयापन की जगह दूसरी नहीं हो सकती।

परमपूज्य गुरुदेव के शब्दों में—भविष्य के कदमों की आहट जिन्होंने भी सुनी है, उन सबका यही कहना है कि कल की दुनिया शहरों की नहीं, गाँवों की होगी। शहरों की बेतहाशा बाढ़ ने ही संकट के बीज बोए हैं।

यदि हम इनसे बचना चाहते हैं, तो फिर से गाँवों की ओर लौट चलें। बेटा, किसान होना कोई छोटी बात नहीं है। किसान हैं, गाँव हैं, तो जीवन है।

जितना किसान समृद्ध होंगे, गाँव विकसित होंगे, उतना ही भारतीय जीवन विकसित एवं समृद्ध होगा।

पूज्य गुरुदेव का कहना था कि घर-घर कुटीर उद्योग पनपें, ग्रामोद्योग, कृषि उद्योग हमारी अर्थशक्ति का आधार बनें, तो गाँव स्वावलंबी बनेंगे।

शहरीकरण जो आज की सबसे बड़ी विभीषिका लाने वाला कारण बन गया है, उसे भी गाँव की ओर वापस लौटो, अभियान को सार्थक बनाकर तभी ही कम किया जा सकेगा, जब सभी को आर्थिक सुरक्षा गाँवों में ही रहने में दिखाई देगी। इससे स्वदेशी आंदोलन भी गति पकड़ेगा व बहुराष्ट्रीयकरण से मोर्चा लेना भी आसान होगा। गाँव को स्वावलंबी बनाने से ही गाँव व शहर, दोनों की समस्याओं से मुक्ति मिल सकेगी।

पूज्य गुरुदेव के मन में कुटीर उत्पादों के माध्यम से जनसामान्य की आवश्यकताओं की पूर्ति का उत्साह प्रारंभ से ही रहा है। उन्होंने किशोरावस्था में ही आँवलखेड़ा में बुनाई केंद्र की स्थापना की थी। गायत्री तपोभूमि मथुरा में युग निर्माण विद्यालय की स्थापना के साथ जुलाई, 1967 में युग निर्माण योजना के अंतर्गत स्वावलंबन प्रशिक्षण का पहला प्रयोग प्रारंभ किया गया। इस प्रसंग में पूज्यवर का कहना था कि मैं लोकसेवियों की एक नई पीढ़ी तैयार करना चाहता हूँ, जो भिक्षाजीवी नहीं, श्रमजीवी हों।

शांतिकुंज में युगशिल्पी सत्रों के साथ स्वावलंबी उद्योगों के प्रशिक्षण को जोड़ा गया, तब उनका कहना था कि प्रश्न यह नहीं है कि यहाँ लोगों को क्या बनाना सिखाया गया। असली बात यह है कि उनमें स्वावलंबन की वृत्ति और उसके अनुरूप गुणों का विकास हुआ या नहीं। इसके पीछे निहित दर्शन स्पष्ट था कि,

(1) लोकसेवी स्वावलंबी बनें।

(2) जनमानस में श्रम के संकोच व नौकरी की मानसिकता से उबारकर उनमें उद्यमिता एवं कौशल का विकास किया जाए। कुटीर उद्योगों एवं ग्रामोद्योगों की ओर उन्मुख किया जाए। (3) स्वावलंबी उद्योगों के तंत्र का विकास **सर्वे भवन्तु सुखिनः** की यज्ञीय मानसिकता के साथ किया जाए।

बेरोजगारी एवं स्वावलंबन पर पूज्य गुरुदेव का स्पष्ट मत था कि श्रम की प्रचुरता एवं नियोजन हेतु पूँजी न्यूनता की स्थिति में कुटीर उद्योग ही एकमात्र समाधान दे सकते हैं। इन्हीं से बेरोजगारी मिटाने व असंख्य ग्रामीणों की औसत आय बढ़ाने का शाश्वत आधार बन सकता है।

निर्ममो निरहंकारो न किञ्चदिति निश्चितः।
अंतर्गलित सर्वाशः कुर्वन्नपि न लिप्यते॥

—अष्टावक्र गीता (17/19)

अर्थात अभ्यंतर में जिसकी आशाएँ मलिन हो गई हैं और जो निश्चयपूर्वक जानता है कि इस संसार में कुछ भी प्राप्त करने लायक नहीं है, ऐसा ममतारहित अहंकारशून्य पुरुष कर्म करते हुए भी उनसे लिप्त नहीं होता।

बेरोजगारी का समाधान तब होगा, जब यह श्रम पर आधारित हो, स्थान की दैनिक आवश्यकता एवं स्थानीय संसाधनों पर आधारित हो और प्रकृति मैत्रिक हो। साथ ही सहकारिता पर आधारित हो और कम पूँजी और कम प्रशिक्षण पर आधारित हो। उनकी स्पष्ट धारणा रही कि कुटीर उद्योग को हर घर में स्थान मिले और हर खाली हाथ को काम मिले।

कुटीर उद्योग के संदर्भ में पूज्य गुरुदेव का भविष्यकथन पठनीय एवं विचारणीय है। उन्होंने कहा था कि आने वाले दिनों में कुटीर उद्योग ही प्रमुख होंगे। वे गाँव-कस्बों में चलेंगे और सहकारी स्तर पर उनका ढाँचा खड़ा होगा। असमंजस उनके सामने है, जो बड़े व्यवसायों में फँसे हैं। उन्हें समय के साथ बदलना होगा। अच्छा हो वे हठ न करें और समय रहते बदलने की प्रक्रिया प्रारंभ कर दें अन्यथा एक साथ झटका पड़ने पर वे सँभल न सकेंगे। अगले दिनों अर्थतंत्र चलेगा इसी तरह, मुड़ेगा इसी तरफ। इसलिए इस संभावना को भविष्यवाणी मान कर नोट कर लिया जाए और जिनसे इसका संबंध है, वे अपना ढर्रा अभी से बदलना प्रारंभ कर दें।

(अखण्ड ज्योति, जुलाई 1984)

स्वावलंबन के संदर्भ में पूज्य गुरुदेव के कुछ कथन चिंतन-मनन योग्य हैं—

(1) स्वावलंबन की प्रगति आँधी-तूफ़ान की तरह गति पकड़ेगी।

(2) शहरों का मुटापा हलका होगा और दुबले गाँव कस्बे बनकर मजबूत दृष्टिगोचर होने लगेंगे।

(3) शहर वाले गाँव की ओर लौटने की तैयारी करेंगे।

(4) गाँव स्तर पर बनाई जा सकने वाली सभी वस्तुएँ गाँव में ही बनाई जाएँगी।

अगले दिनों आर्थिक प्रगति व बेकारी की समस्या का हल निकालने के लिए न केवल कुटीर उद्योगों का विस्तार करना होगा, वरन सहकारी आंदोलन को भी गति देनी पड़ेगी। मिल-जुलकर काम करने से ही अंततः हमारी भौतिक समस्याओं का समाधान होगा। शिक्षा, उद्योग व सहकारिता की सम्मिश्रित त्रिवेणी में स्नान करने से ही हमारे भौतिक अभाव एवं दारिद्र्य का अंत होगा।

पूज्य गुरुदेव का मानना था कि ग्रामीण क्षेत्र में कार्यकौशल का अभाव नहीं है, अभाव है तो दिशाधारा का। अतः प्रतिभा को उभारने, निखारने की आवश्यकता है। आत्मनिर्भरता के दूरदर्शी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए परमपूज्य गुरुदेव ने प्रारंभ से ही अपने युग निर्माण अभियान में स्वावलंबन की लौ को सदैव प्रदीप्त रखा और गायत्री तपोभूमि मथुरा से लेकर शांतिकुंज तक स्वावलंबन प्रशिक्षण की व्यवस्था रखी।

शांतिकुंज के युगशिल्पी सत्रों में जहाँ एक मासीय सत्रों में स्वावलंबन का प्रशिक्षण अनिवार्य रूप से जुड़ा रहा, वहीं शांतिकुंज में रचनात्मक प्रकोष्ठ की स्थापना हुई और वर्ष—1997 से रचनात्मक कार्यक्रमों के अंतर्गत 7 दिवसीय स्वावलंबन प्रशिक्षण सत्र प्रारंभ हुए। जो सन् 2002 में देव संस्कृति विश्वविद्यालय की स्थापना के बाद ग्राम प्रबंधन विभाग के अंतर्गत आगे बढ़ते गए, जिसके अंतर्गत कुटीर उद्योग, स्वावलंबन एवं उद्यमिता प्रशिक्षण की दिशा में कई प्रयास चल रहे हैं।

गोशाला प्रबंधन से लेकर गौ-उत्पाद आधारित केंचुआ खाद, साबुन, फेसपैक, दंत मंजन, धूपबत्ती, गोमूत्र आधारित—गोमय अर्क घनवटी, शैंपू, आई ड्रॉप्स, दरद निवारक तेल एवं जैविक कीट नियंत्रक एवं नाशक, गोबर गैस आदि उत्पाद इसी प्रयत्न-पुरुषार्थ का परिणाम हैं। इसके साथ फल-सब्जी प्रसंस्करण एवं संरक्षण के अंतर्गत जैम, जेली, मुरब्बा, स्क्वैश, शर्बत, अचार, चटनी, कैंडीज एवं अवलेह आदि तैयार करने का प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

हथकरघा प्रशिक्षण के अंतर्गत कताई (देसी एवं न्यू मॉडल अंबर चरखा), बुनाई (हैंडलूम एवं पावरलूम) तथा सूती एवं ऊनी कपड़े, दरी एवं कालीन आदि के प्रशिक्षण की व्यवस्था है। हस्तनिर्मित कागज एवं कागज उत्पाद जैसे—फाइल कवर, लिफाफे, कैरी बैग, राइटिंग पैड, कार्ड्स (विवाह, बधाई, निमंत्रण, विजिटिंग कार्ड्स), पेन

स्टैंड, फोटो फ्रेम आदि भी यहाँ कुशलता से तैयार हो रहे हैं।

जूट उत्पाद, मोबाइल कवर, बोतल बैग्स, बेबी बैग्स, शॉपिंग बैग, कॉन्फ्रेंस बैग्स, ग्रोसरी बैग्स, वॉल हेंगिंग्स, पर्स, शोल्डर बैग्स, टिफिन बैग्स आदि के साथ साबुन-डिटरजेंट, फिनाइल, मोम उत्पाद तथा धूप-अगरबत्ती भी तैयार किए जाते हैं। औषधीय एवं सुगंधीय पौधों के उत्पादन तथा मधुमक्खी पालन के प्रशिक्षण की भी यहाँ व्यवस्था है।

विश्वविद्यालय में स्वावलंबन से जुड़े इन कुटीर उद्योगों की 9 दिन से लेकर 3 माह के प्रशिक्षण की व्यवस्था है, जिनमें 9 दिवसीय रचनात्मक प्रशिक्षण, 10 दिवसीय स्क्रीन प्रिंटिंग, कागज उत्पाद, केंचुआ खाद, धूपबत्ती, 15 दिवसीय गोशाला प्रबंधन, 15 दिवसीय जूट-उत्पाद (केवल महिलाओं के लिए), एकमासीय फल-सब्जी प्रसंस्करण, एकमासीय हौजरी (मफलर, स्वेटर), दोमासीय हस्तनिर्मित कागज, तीनमासीय सिलाई प्रशिक्षण (केवल पुरुष), हथकरघा प्रशिक्षण, 45 दिवसीय स्वावलंबन प्रशिक्षण आदि के प्रशिक्षण की व्यवस्था है। 2 दिवसीय यज्ञोपवीत निर्माण भी इसमें शामिल है।

इन प्रशिक्षणों की न्यूनतम अर्हता—कक्षा 10 तथा शांतिकुंज से साधना सत्र का अनुभव है और 18 से 60 वर्ष आयु के सुपात्र अभ्यर्थी इन्हें कर सकते हैं। यहाँ से प्रशिक्षण प्राप्त कर कई उद्यमी अपने-अपने गाँव-कस्बों में स्वावलंबन की अलख जगा रहे हैं।

गायत्री परिवार के कई गायत्री शक्तिपीठ एवं चेतना केंद्र इस दिशा में अपने स्तर पर सक्रिय स्वावलंबन केंद्र के रूप में अपनी उल्लेखनीय भूमिका निभा रहे हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अंतर्गत स्वावलंबी युवाओं को दिशा देते स्किल एन्हान्समेंट कोर्स (SEC) इसी दिशा में काम कर रहे हैं। मालूम हो कि गायत्री तीर्थ शांतिकुंज का देव संस्कृति विश्वविद्यालय भारत के उन चुनिंदा विश्वविद्यालयों में से है, जहाँ राष्ट्रीय शिक्षा नीति समग्र रूप में लागू की गई है।

इसमें मेजर, माइनर, मल्टीडिसिप्लिनरी, एईसी (AEC) एवं वेल्यू एडिड कोर्स (VAC) के साथ कौशल आधारित कई पाठ्यक्रम (AEC) स्नातकों के लिए उपलब्ध हैं, जिसमें योग प्रोटोकोल, मर्म चिकित्सा, यज्ञ चिकित्सा, वनौषधि विज्ञान, रचनात्मक लेखन, अनुवाद कला, संचार कौशल, फोटोग्राफी, वीडियोग्राफी, ब्लॉगिंग, डॉक्यूमेंट्री मेकिंग, साइबर सुरक्षा, डिजिटल सोल्यूशन्ज, टूर गाइडेंस, ट्रैवल राइटिंग, वैदिक गणित, माइक्रो टीचिंग, भारतीय मनोचिकित्सा, यज्ञ एवं षोडश संस्कार, जीवन कौशल, युग संगीत, वाद्ययंत्र प्रशिक्षण, गोशाला प्रबंधन, ग्रामीण स्वरोजगार एवं स्व-उद्यमिता के पाठ्यक्रम उल्लेखनीय हैं।

आगे चलकर इनको और विधिवत् प्रसार दिया जाना है, ताकि घर बैठे मिश्रित हाइब्रिड प्रारूप में ऐसे कौशल आधारित पाठ्यक्रमों की व्यवस्था हो सके। कह सकते हैं कि पूज्य गुरुदेव के निर्दिष्ट पथ के अनुरूप स्वावलंबन की दिशा में शांतिकुंज एवं देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रयास गतिशील हैं और असीम संभावनाओं से भरे इस क्षेत्र में बहुत कुछ किया जाना अभी शेष है।

सभी गायत्री शक्तिपीठों, प्रज्ञा केंद्रों एवं गायत्री चेतना केंद्रों से आशा की जाती है कि वे न्यूनतम किसी एक कुटीर उद्योग की स्थापना एवं इसके प्रशिक्षण की व्यवस्था से शुभारंभ कर स्वावलंबन आंदोलन को आगे बढ़ाएँ—जो सही माने में स्वावलंबन दर्शन की प्रेरक गुरुसत्ता की चिंतन-चेतना के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी। ❑

जीवन आनंद की यात्रा है

जिसे अपने भीतर की दिव्यता का बोध हो गया, त्रह फिर इस संसार में एक ही प्रकार से विचरण कर सकता है—वह है आनंद की ओर। आनंद क्या है? मनुष्य की निर्विकार अवस्था, हर प्रकार की चिंता से परे, एकत्व के संग।

ऐसा तभी होता है जब हम पूर्णत: उस ईश्वर को समर्पण कर दें, जिसके द्वारा हम परिचालित हैं। उसी के दिशाकदमों पर हम चलना सीखें तथा वही हमें प्रत्येक परिस्थिति में एकनिष्ठ रखे। जब हम उसके अनुरूप जीवनयापन करते हैं तो स्वत: ही हमारे कष्ट-पाप दूर हो जाते हैं तथा हमारा जीवन अपने आदर्श स्वरूप की प्राप्ति करता है।

हमारे भीतर की दैवी प्रेरणा मुखरित होकर हमें सदा ऊर्ध्वमुखी विकासक्रम अपनाने हेतु बाध्य करती है। यही चमत्कार है। जब तक मनुष्य अपनी समस्याओं में जकड़ा रहेगा, उसे अपनी आत्मा के कल्याण का पथ दृष्टिगोचर नहीं हो सकेगा। उसका जीवन उस प्रकाश के स्रोत से वंचित रह जाएगा, जिसके लिए उसने जन्म लिया है।

हमें चाहिए कि हर प्रकार के विषय-बंधनों से परे स्वयं को देखना सीखें। यही आनंद की यात्रा है। जिसके पास आनंद है, उसे इस संसार में भटकना नहीं पड़ता। हमारी आत्मा चाहती है कि वह सदा मुक्त रहे, परंतु हम ही उसे व्यर्थ के जंजाल में फँसाए रहते हैं।

यदि हम जाग सकें तो देखेंगे कि हर क्षण उस आनंद से ओत-प्रोत है, जिसके लिए हमारा जीवन लालायित रहता है। हम उसे पहचान पाएँ यह तभी संभव है, जब हमारी आत्मा प्रकाशित होकर जीवन के अनुसंधान की दिशा में बढ़े।

इसके लिए सर्वप्रथम हमें अपने भीतर से सभी आसक्ति-दोष मिटाने होते हैं तथा यह संकल्प ग्रहण करना होता है कि हम पूर्णत: आत्मावलंबी बनेंगे। जो कुछ भी इस आत्मा के विरुद्ध कार्य करे उसे त्यागने में हमें कठिनाई न हो तथा हम स्वयं में निश्चिंत अनुभव करें।

जिसके पास आत्मचेतना से संयुक्त दृष्टिकोण है, वह कभी भी दु:ख-दुविधाग्रस्त नहीं हो सकता है। उसकी प्रतिभा सदा उसे उत्थान की दिशा में अग्रसर करेगी तथा उसका जीवन सुख-शांति से परिपूर्ण हो उठेगा। ऐसा व्यक्ति इस संसार में पुण्य के प्रसार हेतु ही कार्य कर सकता है; क्योंकि उसका व्यक्तिगत स्वार्थ कुछ रह नहीं जाता।

आनंद की पराकाष्ठा को प्राप्त कर हम क्या लेन-देन कर सकते हैं, हमें किस चीज की कमी हो तथा हम किस प्रकार स्वयं को इस संसार के ही मतभावों में बनाए रख सकते हैं? अपनी आत्मा की पूर्णता ही हमें प्रिय है, फिर हम उसे कैसे व्यर्थ जाने दें या तो यह संसार हम पर हावी हो जाए या हम ही इसके नियंता बन जाएँ।

यदि हम इससे ऊपर उठना सीख गए तो प्रत्येक अवस्था में हमारा मन शांत, अविचलित एवं धैर्य से युक्त अनुभव करेगा। इसके लिए अपनी वृत्तियों पर नियंत्रण आवश्यक है तथा उसके उपरांत हमें डिगा पाना संभव नहीं। हम अपनी आत्मा को पूर्णत: जाग्रत करें उसे उसके महान वैभव की प्राप्ति हेतु आगे बढ़ने दें। इसी में जीवन का उद्धार है तथा आनंद भी हमारी सभी कामनाओं के मध्य में वह विचार-बीज है, जिसके द्वारा जीवन सच में अपनी महानता को प्राप्त करता है। ❑

भावुकता से भावना की यात्रा

जीवन का आधार है भावना। भावनाविहीन जीवन की परिकल्पना तक संभव नहीं है। भावना जीवन को सरस, सहज और सजल बनाती है। संवेग भावना का ही एक रूप है। संवेग (इमोशन) के बिना जीवन कुछ अधूरा-अधूरा-सा रहता है। यदि प्रेम न हो, क्रोध न हो, आक्रोश न हो, ईर्ष्या न हो, दया न हो तो जीवन बेजान और नीरस हो जाएगा।

संवेग या भाव कितने महत्त्वपूर्ण हैं, यह हम किसी दिन का अखबार उठाकर देखें तो अनुमान लगा सकेंगे। पाएँगे कि तमाम घटनाएँ संवेगों के ही इर्द-गिर्द घूम रही हैं। हिंसा का कारण संवेग है और किसी व्यक्ति या समाज को सहायता देना भी संवेग का ही मामला है। संवेग संचार माध्यमों पर छाया हुआ है। आप टीवी खोलते ही पाते हैं कि वह तमाम तरह के संवेगों की अभिव्यक्तियों को प्रस्तुत कर रहा है।

संवेग तात्कालिक भौतिक घटनाओं से जुड़ा भी है और स्वतंत्र भी। इसमें हमारी स्मृति की बड़ी भूमिका होती है। संवेग का प्रमुख कार्य है संचार अर्थात संवेग हमें कुछ सूचना देते हैं। हमारी हँसी, हमारी रुलाई हमारे अन्य व्यवहार जो विभिन्न संवेगों के साथ घटित होते हैं, दूसरों को कुछ बताते हैं, सूचित करते हैं—वे निमंत्रित कर सकते हैं, या दूर भागने का संकेत दे सकते हैं, तटस्थ रहने को कह सकते हैं, पर वे कुछ बताते जरूर हैं।

संवेग न केवल हमारी शारीरिक रचना या दैहिक प्रक्रिया पर निर्भर करते हैं, बल्कि समाज पर भी निर्भर करते हैं। विभिन्न समाजों में संवेगों की न केवल शब्दावली भिन्न है। बल्कि उनकी अभिव्यक्ति भी भिन्न-भिन्न है। प्यार का इजहार कैसे किया जाता है? क्रोध को कैसे व्यक्त किया जाता है?

ये सब अपनी संस्कृति से मिली विरासत पर निर्भर करता है। संवेगों के प्रदर्शन करने के भी कुछ नियम होते हैं। प्रेम कैसे प्रदर्शित किया जाए? क्रोध कैसे प्रदर्शित किया जाए? चिंता कैसे प्रदर्शित की जाए? इन सबके सांस्कृतिक नियम हैं।

यह भी ध्यान देने योग्य है कि संवेग को लेकर कई तरह की भ्रामक धारणाएँ बनी हुई हैं। उदाहरण के लिए एक धारणा यह है कि संवेग तो कुछ स्त्रित्व जैसी बात है। संवेगवान या भावुक होना कोई पौरुष की बात नहीं है। यह भी एक भ्रांति है कि संवेग नकारात्मक होते हैं। अक्सर बातचीत में लोगों को यह कहते पाया जाता है 'तुम भावुक मत हो, नहीं तो सब गड़बड़ा जाएगा।' भावुक होने को कमजोरी माना जाता है। अवसाद और चिंता भी संवेग हैं।

आज हम नकारात्मक संवेगों के बारे में ज्यादा जानते हैं, और सकारात्मक संवेगों के बारे में बहुत कम, परंतु कुछ समय पूर्व सकारात्मक संवेगों की ओर लोगों का ध्यान गया है। स्मरणीय है कि बुद्धि और भाव, दोनों जुड़े हुए हैं।

हमारे मस्तिष्क में सेरिब्रल कॉर्टेक्स जो बौद्धिक प्रक्रियाओं को नियमित करता है, ऊपर है। थैलेमस ओर अन्य 'सबकॉर्टिकल' क्षेत्र कहा जाता है, जहाँ संवेग सक्रिय होते हैं, वे कॉर्टेक्स के थोड़े नीचे स्थित हैं। दोनों के बीच अंत:क्रिया होती है अर्थात संवेग हमारे संज्ञान को प्रभावित करते हैं। एक के बिना दूसरे को समझना असंभव है।

संवेग के बहुत सारे पक्ष ऐसे हैं, जिन्हें हम लोग अपने जीवन में सीखते हैं। गुस्सा कब किया जाए? कैसे किया जाए? कितनी मात्रा में किया जाए? क्यों किया जाए? यह सब अपने अनुभव से सीखा जाता है। फिल्मों में अभिनेता एक चरित्र को जीता है, वह प्यार या शत्रुता दिखाता है, घृणा दिखाता है, और देखने वाले का चित्त या मन बदल जाता है।

भक्ति का चित्रण देख उसकी आँखों से आँसू झरने लगते हैं। भाव के अनुभव में विद्यमान रस की विशद व्याख्या भारतीय चिंतन में मिलती है। 'सहृदय' व्यक्ति रस का अनुभव करने वाला 'रसिक' होता है। इसी से जुड़ा एक और शब्द है 'सामाजिक'। यह अनुभूति और ठीक से उसका अनुभव कर पाना प्रतिभा पर निर्भर करता है, पर उसके लिए प्रशिक्षण भी जरूरी है।

जीवन में हम सकारात्मक (जैसे—प्रेम, क्षमा, करुणा, हास्य, विनय, दया) और नकारात्मक (जैसे—अवसाद, चिंता, भय, क्रोध) दोनों तरह के संवेगों का अनुभव करते हैं। नकारात्मक संवेग कलह और हिंसा को जन्म देते हैं और लोगों के बीच संवाद टूट जाता है। दूसरी ओर सकारात्मक संवेग हमें सशक्त बनाते हैं, वे इस अर्थ में बड़े महत्त्वपूर्ण हैं कि वे सोचने की क्षमता को उद्दीप्त करते हैं, और नए विकल्पों की ओर ले जाते हैं।

उपनिषदों में कहा गया है कि श्रेय की ओर आगे बढ़ना चाहिए अर्थात वह है जो अच्छा है, और प्रिय भी है। हमें यह अंतर करना पड़ेगा। अच्छा जीवन जीने के लिए जरूरी है कि हम भावनाओं की दुनिया में भी निवेश करें। हमें जो भी अवसर मिलता है, कोशिश करनी चाहिए कि सकारात्मक संवेग को बढ़ाएँ और नकारात्मक संवेग को कम करें।

वैश्वीकरण के इस दौर में लाभ केंद्रीय तत्त्व के रूप में उभरा है। प्रेम जैसे दिव्य एवं दैवी मूल्यों का अवमूल्यन हुआ है। इस दौर में एक शब्द काफी प्रचलन में आया है और वो है इंस्टेंट यानी तत्काल—सब कुछ तत्काल हो जाए, इसी समय घटित हो जाए, बस, प्रतीक्षा न करनी पड़े।

आज सभी बेचैन हैं, जल्दी में हैं और तेज भी हैं। तेजी एवं तीव्रता से भरी इस भाग-दौड़ में जो साथ चलने में सक्षम है, वही उपयोगी एवं प्रासंगिक है, अन्यथा सब व्यर्थ है। इसी विचारधारा ने प्रेम के पावन मूल्यों को भी प्रदूषित किया और इसी के तहत इन्टरनेट, सोशल नेटवर्किंग साइट्स का तेजी से विकास हुआ। इनके अनुसार प्रेम की विषयवस्तु देना नहीं, अपितु लेना हो गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रेम से जुड़े पुरातन आदर्शों; जैसे सहभागिता, कर्त्तव्य, दायित्व, अपनेपन का आज कोई अर्थ ही नहीं रह गया है। वस्तुत: वर्तमान दौर एक सघन एवं घनीभूत संक्रमण से गुजर रहा है।

देखा जाए तो प्रेम इनसान एवं इनसानियत दोनों को पुष्ट एवं विकसित करता है। इनसान जिस भूमि में सर्वांगरूप से विकसित होता है, उसे प्रेम कहते हैं। अत: उसका संबंध मानव के अस्तित्व से है। समाज और संसार चाहे जितना भी विकसित हो जाएँ, एक उदात्त एवं श्रेष्ठ मानव के बिना इनका विकास अधूरा एवं अपूर्ण है। वह अधूरापन एवं अपूर्णता केवल प्रेम के द्वारा ही परिपूर्ण होने की संभावना है। ढाई अक्षर के इस शब्द में सभी प्रकार की गुत्थियों का समाधान सम्मिलित है। इनसानियत के सामने आसन्न अस्तित्व के संकट से उबरने का यही एक माध्यम है।

सेवाभाव से भावनाओं का परिष्कार किया जा सकता है। सेवा से अहंकाररूपी संवेग टूटते-गलते हैं और हृदय में संवेग का भावनाओं में रूपांतरण होने लगता है। पवित्र भावनाओं में किसी भी तरह की नकारात्मकता एवं मनोविकार नहीं होते हैं। वहाँ तो केवल सभी के प्रति अपनापन एवं प्रेम होता है। यही सुखी जीवन का मंत्र है। ❑

पर्व विशेष–नवसंवत्सर

नवसंवत्सर में लक्ष्य सिद्ध करें

कल्पना मनुष्य को ईश्वरप्रदत्त एक प्रमुख शक्ति है, जिसके संग वह जीवन में मनचाहे रंग भर सकता है। इसके सकारात्मक एवं नकारात्मक, दोनों पहलुओं से सभी का नित्य सामना होता रहता है। हालाँकि यह बात दूसरी है कि इसको सचेष्ट रूप से विकसित करने व इससे लाभान्वित होने के प्रयास कम ही होते हैं। इसके अभाव में प्राय: मनुष्य कुकल्पनाओं के जंजाल में भारी त्रास झेलने के लिए विवश होता है।

भय का भूत प्रख्यात है, जो बिना अस्तित्व के भी मात्र कल्पना के आधार पर जीवित हो उठता है और भयाक्रांत व्यक्ति को भीषण यंत्रणा से गुजरने का अनुभव देता है। कल्पना की नकारात्मक शक्ति को हम आएदिन अस्पताल से लेकर श्मशान घाट व बूचड़खानों से गुजरते हुए अनुभव कर सकते हैं, जो हमारी सोच को भय, उद्विग्नता एवं वितृष्णा के भाव से भर देती है और जीवन को नरकतुल्य बना सकती है।

यदि इस कल्पना शक्ति को सकारात्मक दिशा में लगाया जाए, तो आश्चर्यजनक परिणाम आ सकते हैं। कल्पना शक्ति के बल पर हम लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं, अपना सपना साकार कर सकते हैं, अपनी कमियों व दुर्बलताओं को दूर कर सकते हैं, स्वास्थ्य से लेकर धन, वैभव, ऐश्वर्य को आकर्षित कर सकते हैं। अपनी आदतों को सुधारकर व्यक्तित्व को मनचाहा रूप दे सकते हैं और आध्यात्मिक विकास कर जीवन में सौभाग्य के सूर्योदय को अंजाम दे सकते हैं।

कलाकार, लेखक, कवि, वैज्ञानिक आदि सभी कल्पना शक्ति का भरपूर उपयोग करते हैं। कहावत प्रसिद्ध है कि जहाँ न पहुँचे रवि, वहाँ पहुँचे कवि।

कल्पना के सहारे ही कवि से लेकर लेखक, वैज्ञानिक एवं विचारक पल भर में विश्व–ब्रह्मांड की सैर कर आते हैं, अपनी सृजन–साधना में नए रंग भरते हैं और संसार को कुछ नया देकर जाते हैं और यह जीवन के हर क्षेत्र में न्यूनाधिक रूप में लागू होता है। कल्पना सृजन का प्रवेश द्वार है, जो संकल्प से सिद्धि की यात्रा को त्वरित करती है और महान सृजन को संभव बनाती है।

विश्व में अपने–अपने क्षेत्रों में शीर्ष स्थान पर प्रतिष्ठित लोग किसी–न–किसी रूप में कल्पना शक्ति का ही सहारा लेते हैं। विश्वस्तर पर ऑलम्पिक्स में मेडल लेने वाले, विश्व रिकॉर्ड बनाने वाले शीर्ष खिलाड़ी सभी कल्पना शक्ति का ही उपयोग करते हैं। जीवन के हर क्षेत्र में कल्पना ही अव्यक्त से वांछित ध्येय को आकर्षित कर प्रत्यक्ष एवं मूर्त करती है।

आइंस्टाइन अपने युगांतरीय वैज्ञानिक शोध कार्यों में कल्पना की शक्ति का लोहा मानते हैं। अध्यात्म–क्षेत्र भी इसका अपवाद नहीं। मीरा के कृष्ण, रामकृष्ण परमहंस की माँ काली और एक निराकार साधक के ब्रह्म कल्पना के पंख लगाकर भरी गई उड़ान के ही तो परिणाम हैं, जो अपनी श्रद्धा–भक्ति एवं समर्पण के चरम पर साकार हो उठते हैं, जिनकी आभास से फिर पूरा विश्व चमत्कृत हो उठता है। कल्पना की इस अमोघ शक्ति को

समझते हुए नवसंवत्सर में इसका भरपूर उपयोग करते हुए जीवन को मनचाही दिशा दे सकते हैं— इसे एक यादगार वर्ष बना सकते हैं।

नए संवत्सर में आप जो करना चाहते हैं, जो पाना चाहते हैं, जैसा बनना चाहते हैं, उसे एक कागज पर लिख लें। इसके अनुरूप अपना विजन बोर्ड बनाएँ और अपने मुख्य लक्ष्य को एक कार्ड पर लिखें। अपने टेबल के सामने, कमरे में जहाँ आपकी दृष्टि पड़ती हो, वहाँ-वहाँ इसको टाँग सकते हैं। अपनी पॉकेट डायरी में इसे लिख सकते हैं और कार्ड को पॉकेट में रख सकते हैं, ताकि दिन भर इसका स्मरण बना रहे। लक्ष्यसिद्धि के लिए इसका सतत स्मरण बनाए रखना महत्त्वपूर्ण रहता है।

उस स्थिति की कल्पना करें, जब आप उस लक्ष्य को प्राप्त कर चुके होंगे, वैसे बन चुके होंगे, मनचाहे शिखर को छू चुके होंगे। आपका व्यक्तिगत जीवन उस स्थिति में कैसा होने वाला है, आपका पारिवारिक और सामाजिक जीवन कितना सुखद व भव्य रूप लेने वाला है, आपका व्यावसायिक जीवन उपलब्धियों के किन उल्लेखनीय सोपानों को पार करने वाला है, इसकी सुखद एवं आशापूरित कल्पना करें। साथ ही राह की संभावित चुनौतियों का खाका भी स्पष्ट हो, इसका सामना करने की रणनीति भी योजना का हिस्सा हो। इस तरह कल्पना शक्ति की प्रगाढ़ता के अनुरूप अमूर्त लक्ष्य क्रमिक रूप से मूर्त होने लगेगा।

आपके प्रयास, चेष्टाएँ, संकल्प और विचारणा इसी दिशा में प्रवाहित होने लगेंगे। अपने कल्पित ध्येय को तैयार की गई कार्ययोजना के अनुरूप पूरी निष्ठा के साथ नित्यप्रति लागू करें। बड़े लक्ष्य को छोटे-छोटे टुकड़ों में बाँटें। नित्य इनके लिए एक समय निर्धारित रखें और दृढ़ता के साथ इसका पालन करें।

छोटी-छोटी सफलताओं के साथ आत्मविश्वास बढ़ेगा और बड़े कदम संभव होंगे। साथ ही अपने ज्ञान का दायरा बढ़ाते रहें। प्रतिदिन कुछ नया पढ़ें। इससे आपकी कल्पना शक्ति नई ऊँचाइयों को छुएगी।

इसे और व्यापक रूप देने के लिए स्वाध्याय एवं सत्संग की व्यवस्था करें; क्योंकि जीवन के गहनतम सत्य के साथ मंडित कल्पना ही पूर्ण संतुष्टि का आधार हो सकती है। आवश्यकता पड़ने पर विशेषज्ञों से परामर्श लें। प्राप्त जीवन सूत्रों पर गहन मंत्रणा करें।

==========

तत्त्वज्ञान मान्यताओं एवं भावनाओं को प्रभावित करता है। इन्हीं का मोटा स्वरूप चिंतन, चरित्र एवं व्यवहार है। गायत्री का तत्त्वज्ञान, इस स्तर की उत्कृष्टता अपनाने के लिए सद्विषयक विश्वासों को अपनाने के लिए प्रेरणा देता है। उत्कृष्टता, आदर्शवादिता, मर्यादा एवं कर्त्तव्यपरायणता जैसी मानवीय गरिमा को अक्षुण्ण बनाए रखने वाली आस्थाओं को गायत्री का तत्त्वज्ञान कहना चाहिए।

—परमपूज्य गुरुदेव

==========

अपने कल्पित ध्येय को पुष्ट करते एक विचार पर भी नित्य गहन मंथन बहुत उपयोगी साबित हो सकता है। इसके लिए नित्य अपने लक्ष्य के लिए कुछ समय अवश्य दें। यह कल्पना को मूर्त करने वाला विजुअलाइजेशन व्यायाम है। इस समय डायरी लेखन से लेकर ध्यान का अभ्यास कर सकते हैं।

अपने दिन भर के अनुभवों पर एक नजर दौड़ाएँ, प्राप्त शिक्षाओं को नोट करें, आगे के लिए मिले सूत्र-संकेतों को समझें। इससे विचारों में स्पष्टत: आएगी, जीवन की समझ और गहरी होगी तथा जीवन की भावी दिशाधारा स्पष्ट होगी और सही निर्णय की राह सूझेगी।

इसके साथ नए संवत्सर में अपने व्यक्तित्व के समग्र रूपांतरण की एक कार्ययोजना बनाएँ, जिसमें शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक संतुलन, भावनात्मक स्थिरता, आध्यात्मिक उन्नयन और कौशल विकास की समग्रता परिलक्षित होती हो। इनके न्यूनतम कार्यक्रम के साथ आगे बढ़ें और सर्वोपरि अस्तित्व के आधार अंत:प्रेरणा को सुनें।

इसमें सद्गुरु के वचनों का सार प्रतिध्वनित होगा, उनका प्रेरणा प्रकाश दिखेगा। उनकी चिंतन चेतना एवं बताई राह के प्रकाश में जीवन के रूपांतरण की पटकथा लिखें। याद रखें, सब कुछ पाकर भी यदि स्वयं को न जान पाए व खुद को खो दिया, तो क्या पाया। अत: आत्मतत्त्व को केंद्र में रखकर जीवन को पुनर्परिभाषित करें।

इस तरह परिस्थितियों के चक्रव्यूह में उलझा जीवन एक त्रासदी से हटकर एक सौभाग्य में बदल जाएगा। ईश्वरीय कार्य का उपकरण बनेगा, जो स्वयं के तन, मन, प्राण एवं आत्मा को ऊर्ध्वगामी दिशा तथा दूसरों को सत्पथ पर चलने की प्रेरणा दे रहा होगा।

इन शिव-संकल्पों के संग कल्पना के शिखर को छूता नूतन संवत्सर निश्चित रूप से एक यादगार संवत्सर बनेगा। ❑

एक भक्त भगवान के दर्शनों के लिए व्याकुल था। अपनी आकांक्षा लेकर वह एक संत के पास पहुँचा। संत ने उसे सदन कसाई से मिलने के लिए कहा। भक्त को देखते ही सदन बोला—"तुम भगवान से मिलना चाहते हो, शाम तक प्रतीक्षा करो। साथ घर चलेंगे, तब मार्ग बता पाऊँगा।"

भक्त को आश्चर्य हुआ कि सदन उसके मन की बात कैसे समझ गया? शाम होने पर सदन भक्त को लेकर घर पहुँचा। वहाँ उसने अपने पिता की सेवा की, बच्चों को प्यार किया और पत्नी से घर का हाल-चाल पूछा। इतना करके उसने भक्त की ओर देखा।

इधर भक्त का मन प्रश्नों से घिरा था। वह सोच रहा था कि भला एक कसाई मुझे ईश्वरप्राप्ति का मार्ग कैसे बता सकता है? वह ऐसा सोच ही रहा था कि सदन उसे संबोधित करते हुए बोला—"बंधु! तुम सोच रहे होगे कि जो मार्ग संत नहीं बता पाए, वह एक कसाई क्या बता पाएगा।?" कसाई कुल में जन्म लेना तो मेरे हाथ में नहीं था, वह तो मैं नहीं बदल सकता था, परंतु जीवन के प्रति दृष्टिकोण को बदलना मेरे लिए संभव था। मैंने जाना कि पिता, पत्नी, बच्चों व समाज के प्रति मेरे उत्तरदायित्व हैं। उन्हें निष्काम भाव से पूर्ण करते हुए मैं भगवान का नाम लेता रहता हूँ और वे भी प्रतिक्षण अपनी उपस्थिति का आभास मुझे कराते रहते हैं। सदन की बात सुनकर भक्त की आँखें खुल गईं, उसे ईश्वरप्राप्ति का मार्ग मिल गया।

भारतवर्ष में वंश-परंपरा

परमात्मा के '**एकोऽहं बहुष्याम्**' के संकल्प से सृष्टि-चक्र का उद्भव हुआ। परमात्मा ने स्वयं को त्रिदेव के रूप में प्रकट किया और त्रिदेव से ही संतानोत्पत्ति की प्रक्रिया प्रारंभ हुई। हिंदू धर्म के अनुसार आर्य—ब्रह्मा, विष्णु, महेश और ऋषि-मुनियों की संतानें हैं।

ब्रह्मा, विष्णु और महेश के कई पुत्र और पुत्रियाँ थीं। इन सभी के पुत्रों और पुत्रियों से ही देव (सुर), दैत्य (असुर), दानव, राक्षस, गंधर्व, यक्ष, किन्नर, वानर, नाग, चारण, निषाद, मातंग, रीक्ष, भिल्ल, किरात, अप्सरा, विद्याधर, सिद्ध, निशाचर, वीर, गुह्यक, कुलदेव, स्थानदेव, ग्रामदेवता, पितर, भूत, प्रेत, पिशाच, कूष्मांडा, ब्रह्मराक्षस, वैताल, क्षेत्रपाल, मानव आदि की उत्पत्ति हुई।

वंश लेखकों, तीर्थ-पुरोहितों, पंडों व वंश-परंपरा के वाचक संवाहकों द्वारा समस्त आर्यावर्त के निवासियों को एकजुट रखने का जो अभूतपूर्व प्रयास किया गया है, वह निश्चित रूप से वैदिक ऋषि-परंपरा का ही अद्यतन आदर्श उदाहरण माना जा सकता है।

पुराणों के अनुसार द्रविड़, चोल एवं पांड्य जातियों की उत्पत्ति में राजा नहुष के योगदान को मानते हैं, जो इलावर्त के चंद्रवंशी राजा थे। पुराण भारतीय इतिहास को जलप्रलय तक ले जाते हैं। यहीं से वैवस्वत मन्वंतर प्रारंभ होता है।

वेदों में पंचनद का उल्लेख है अर्थात पाँच प्रमुख कुल से ही भारतियों के कुलों का विस्तार हुआ।

विभाजित वंश—संपूर्ण हिंदू वंश वर्तमान में गोत्र, प्रवर, शाखा, वेद, शर्म, गण, शिखा, पाद, तिलक, छत्र, माला, देवता (शिव, विनायक, कुलदेवी, कुलदेवता, इष्टदेवता, राष्ट्रदेवता, गोष्ठ देवता, भूमि देवता, ग्राम देवता, भैरव और यक्ष) आदि में विभक्त हो गया है। जैसे-जैसे समाज बढ़ा, गण और गोत्र में भी कई भेद होते गए। बहुत से समाज या लोगों ने गुलामी के काल में कालांतर में यह सब छोड़ दिया है तो उनकी पहचान कश्यप गोत्र मान ली जाती है।

कुलहंता—हम संपूर्ण अखंड भारत अर्थात अफगानिस्तान, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल और बर्मा आदि में जो भी मनुष्य निवास कर रहे हैं, वे सभी प्रमुख वंशों से ही संबंध रखते हैं। कालांतर में उनकी जाति, धर्म और प्रांत बदलते रहे, लेकिन वे सभी एक ही कुल और वंश से हैं।

गीता में श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि कुल का नाश तब होता है; जबकि कोई व्यक्ति अपने कुलधर्म को छोड़ देता है। इस तरह वे अपने मूल एवं पूर्वजों को हमेशा के लिए भूल जाते हैं। कुलहंता वह होता है, जो अपने कुल-धर्म और परंपरा को छोड़कर अन्य के कुल-धर्म और परंपरा को अपना लेता है। जो वृक्ष अपनी जड़ों से नफरत करता है, उसका विकास संभव नहीं है।

भारत खंड का विस्तार—महाभारत में प्राग्ज्योतिष (असम), किंपुरष (नेपाल), त्रिविष्टप (तिब्बत), हरिवर्ष (चीन), कश्मीर, अभिसार (राजौरी), दार्द, हूण हुंजा, अम्बिस्ट, आम्ब, पख्तू, कैकेय, गंधार, कम्बोज, वाल्हीक, बलख, शिवि, शिवस्थान—सीस्टान सारा बलूच क्षेत्र, सिंध, सौवीर सौराष्ट्र समेत सिंध का निचला क्षेत्र दंडक महाराष्ट्र

सुरभिपट्टन मैसूर, चोल, आंध्र, कलिंग तथा सिंहल सहित लगभग 200 जनपद वर्णित हैं, जो कि पूर्णतया आर्य थे या आर्य संस्कृति व भाषा से प्रभावित थे।

इनमें से आभीर अहीर, तंवर, कंबोज, यवन, शिना, काक, पणि, चुलूक चालुक्य, सरोस्ट सरोटे, कक्कड़, खोखर, चिंधा चिंधड़, समेरा, कोकन, जांगल, शक, पुण्ड्र, ओड्र, मालव, क्षुद्रक, योधेय जोहिया, शूर, तक्षक व लोहड़ आदि आर्य विशेष उल्लेखनीय हैं।

आज इन सभी के नाम बदल गए हैं। इतिहासकार मानते हैं कि भारत की जाट, गुर्जर, पटेल, राजपूत, मराठा, धाकड़, सैनी, परमार, पठानिया, अफजल, घोसी, बोहरा, अशरफ, कसाई, कुला, कुंजरा, नायत, मेंडल, मोची, मेघवाल आदि हिंदू, मुसलिम, ईसाई, बौद्ध की कई जातियाँ सभी एक ही वंश से उपजी हैं।

हिंदुओं (मूलतः भारतियों) के प्रमुख वंशों के बारे में जिनमें से किसी एक के वंश से हम भी जुड़े हुए हैं। हमारे लिए यह जानकारी महत्त्वपूर्ण हो सकती है। जो खुद को मूल निवासी मानते हैं वे यह भी जान लें कि प्रारंभ में मानव हिमालय के आस-पास ही रहता था।

हिमयुग की समाप्ति के बाद ही धरती पर वन-क्षेत्र और मैदानों का विस्तार हुआ तब मानव वहाँ जाकर रहने लगा। हर धर्म में इसका उल्लेख मिलता है कि हिमालय से निकलने वाली किसी नदी के पास ही मानव की उत्पत्ति हुई थी। वहीं पर एक पवित्र वन था, जहाँ पर प्रारंभिक मानवों का एक समूह रहता था। धर्मों के इतिहास के अलावा धरती के भूगोल और मानव इतिहासकार भी कुछ ऐसा ही मानते हैं।

ब्रह्मा कुल—ब्रह्माजी की प्रमुख रूप से तीन पत्नियाँ थीं। तीनों से उनको पुत्र और पुत्रियों की प्राप्ति हुई। इसके अलावा ब्रह्मा के मानस पुत्र भी थे, जिनमें से प्रमुख के नाम इस प्रकार हैं—1. अत्रि, 2. अंगिरस, 3.भृगु, 4. कर्दम, 5. वसिष्ठ, 6. दक्ष, 7. स्वायंभुव मनु, 8. कृतु, 9. पुलह, 10. पुलस्त्य, 11. नारद, 12. चित्रगुप्त, 13. मरीचि, 14.सनक, 15.सनंदन, 16. सनातन और 17. सनत्कुमार आदि।

स्वायंभुव मनु कुल—स्वायंभुव मनु कुल की कई शाखाएँ हैं। उनमें से एक प्रमुख शाखा की बात करते हैं। स्वायंभुव मनु समस्त मानव जाति के प्रथम संदेशवाहक हैं। स्वायंभुव मनु एवं शतरूपा के कुल में 5 संतानें थीं, जिनमें से 2 पुत्र प्रियव्रत एवं उत्तानपाद तथा 3 कन्याएँ आकूति, देवहूति और प्रसूति थीं।

आत्मा वा इदमेक एवाग्र आसीन्नान्यकिंचन मिषत्। स ईक्षत लोकान्नु सृजा इति॥

—ऐतरेय उपनिषद्-1/1/1

अर्थात पूर्व में एक आत्मा ही थी, अन्य कोई तत्त्व न था, उसी ने अपनी इच्छा से लोक रचे। सब प्राणियों में व्याप्त यही जानने योग्य है।

आकूति का विवाह रुचि प्रजापति के साथ और प्रसूति का विवाह दक्ष प्रजापति के साथ हुआ। देवहूति का विवाह प्रजापति कर्दम के साथ हुआ। रुचि को आकूति से एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम यज्ञ रखा गया। इनकी पत्नी का नाम दक्षिणा था। गौरतलब है कि देवहूति ने 9 कन्याओं को

जन्म दिया, जिनका विवाह प्रजापतियों या सप्त ऋषियों से किया गया था।

देवहूति ने एक पुत्र को भी जन्म दिया था, जो महान ऋषि कपिल के नाम से जाने जाते हैं। भारत के कपिलवस्तु में उनका जन्म हुआ था और वे सांख्य दर्शन के प्रवर्तक थे। उन्होंने ही सगर के 100 पुत्रों को अपने शाप के द्वारा भस्म कर दिया था।

दो पुत्र—प्रियव्रत और उत्तानपाद। उत्तानपाद की सुनीति और सुरुचि नामक दो पत्नियाँ थीं। राजा उत्तानपाद के सुनीति से ध्रुव तथा सुरुचि से उत्तम नामक पुत्र उत्पन्न हुए। ध्रुव ने बहुत प्रसिद्धि हासिल की थी।

स्वायंभुव मनु के दूसरे पुत्र प्रियव्रत ने विश्वकर्मा की पुत्री बर्हिष्मती से विवाह किया था; जिनसे आग्नीध्र, यज्ञबाहु, मेधातिथि आदि दस पुत्र उत्पन्न हुए। प्रियव्रत की दूसरी पत्नी से उत्तम, तामस और रैवत ये तीन पुत्र उत्पन्न हुए, जो अपने नाम वाले मन्वंतरों के अधिपति हुए। महाराज प्रियव्रत के दस पुत्रों में से कवि, महावीर तथा सवन ये तीन नैष्ठिक ब्रह्मचारी थे और उन्होंने संन्यास धर्म ग्रहण किया था।

महाराज मनु ने बहुत दिनों तक इस सप्तद्वीपवती पृथ्वी पर राज्य किया। उनके राज्य में प्रजा बहुत सुखी थी। इन्हीं ने 'मनुस्मृति' की रचना की थी, जो आज मूल रूप में नहीं मिलती है, अत: कभी-कभी प्रचलित वक्तव्यों पर विरोधाभास देखने को मिलते हैं।

उस काल में वर्ण का अर्थ रंग होता था और आज जाति। प्रजा का पालन करते हुए जब महाराज मनु को मोक्ष की अभिलाषा हुई तो वे संपूर्ण राज-पाट अपने बड़े पुत्र उत्तानपाद को सौंपकर एकांत में अपनी पत्नी शतरूपा के साथ नैमिषारण्य तीर्थ चले गए, लेकिन उत्तानपाद की अपेक्षा उनके दूसरे पुत्र राजा प्रियव्रत की प्रसिद्धि ही अधिक रही। सुनंदा नदी के किनारे उन्होंने सौ वर्ष तक तपस्या की। दोनों पति-पत्नी ने नैमिषारण्य नामक पवित्र तीर्थ में गोमती के किनारे भी बहुत समय तक तपस्या की।

प्रियव्रत का कुल—राजा प्रियव्रत के ज्येष्ठ पुत्र आग्नीध्र जंबूद्वीप के अधिपति हुए। आग्नीध्र के नौ पुत्र जंबूद्वीप के नौ खंडों के स्वामी माने गए हैं। जिनके नाम उन्हीं के नामों के अनुसार इलावृत वर्ष, भद्राश्व वर्ष, केतुमाल वर्ष, कुरु वर्ष, हिरण्यमय वर्ष, रम्यक वर्ष, हरि वर्ष, किंपुरुष वर्ष और हिमालय से लेकर समुद्र के भू-भाग को नाभि खंड कहते हैं।

नाभि और कुरु ये दोनों वर्ष धनुष की आकृति वाले बताए गए हैं। नाभि के पुत्र ऋषभ हुए और

इस युग की सबसे बड़ी शक्ति शस्त्र नहीं रहे, वरन उनका स्थान विचारों ने ले लिया है। चूँकि अब शक्ति जनता के हाथ में चली गई है। जनमानस का प्रवाह जिस दिशा में बहता है, उसी तरह की परिस्थितियाँ बन जाती हैं। इस जनप्रवाह को शस्त्रों से नहीं, विचारों से रोका जा सकता है।

—परमपूज्य गुरुदेव

ऋषभ से भरत एवं बाहुबली का जन्म हुआ। भरत के नाम पर ही बाद में इस नाभि खंड को 'भारतवर्ष' कहा जाने लगा। बाहुबली को वैराग्य प्राप्त हुआ तो ऋषभ ने भरत को चक्रवर्ती सम्राट बनाया। भरत को वैराग्य हुआ तो वे अपने बड़े पुत्र को राज-पाट सौंपकर जंगल चले गए। स्वायंभुव मनु के काल के ऋषि मरीचि, अत्रि, अंगिरस, पुलह, कृतु, पुलस्त्य और वसिष्ठ हुए। इन्हीं ने मानव को सभ्य, सुविधा संपन्न और सुसंस्कृत बनाने का कार्य किया। इस प्रकार भारतवर्ष की स्थापना में इन महान वंशों का अविस्मरणीय योगदान रहा। ❑

प्रसन्नता प्रदाता भारतीय संगीत

भारतीय संगीत मन को उल्लसित एवं उमंगित करता है। इससे तन एवं मन स्वस्थ एवं प्रसन्न रहते हैं। संगीत में स्वस्थ शरीर एवं स्वच्छ मन का गहरा रहस्य छिपा है। भारत में संगीत, मधुर ध्वनि के माध्यम से एक योग प्रणाली की तरह से है। संगीत हमारी चेतना को जाग्रत तथा विकसित करता है। मधुर लय भारतीय संगीत का प्रधान तत्त्व है। 'राग' का आधार मधुर लय है। विभिन्न 'राग' केंद्रीय तंत्रिका प्रणाली से संबंधित अनेक रोगों के इलाज में प्रभावी पाए गए हैं। भारतीय संगीत की प्रमुख विशिष्टता 'रागदारी संगीत' है।

राग भारतीय संगीत की आधारशिला हैं। इनके अंतर्निहित स्वर-लय, रस-भाव अपने विशिष्ट प्रभाव से व्यक्ति के मन-मस्तिष्क को प्रभावित करते हैं। जिस प्रकार हर रोग का संबंध किसी-न-किसी ग्रह विशेष से होता है, उसी प्रकार संगीत के हर सुर व राग का संबंध भी किसी-न-किसी ग्रह से अवश्य होता है। यदि किसी को किसी ग्रह विशेष से संबंधित रोग हो और उसे उस ग्रह से संबंधित राग, सुर अथवा गीत सुनाए जाएँ तो जातक यथाशीघ्र स्वस्थ हो सकता है।

स्वर तथा लय की भिन्न-भिन्न प्रक्रियाएँ उसकी शारीरिक क्रियाओं, रक्त संचार, मांसपेशियों, कंठ ध्वनियों आदि में स्फूर्ति ऊर्जा उत्पन्न करते हैं तथा व्याधियों को दूर करते हैं। 'संगीत-मकरंद' ग्रंथ में नारद द्वारा रागों की जातियों (ऑडव-षाडव-संपूर्ण) के आधार पर रोगी के मन और शरीर पर प्रभाव पड़ने का उल्लेख किया गया है। नारद ने 'संगीताध्याय' के प्रकरण में विभिन्न दशाओं में रागों के गायन-वादन का निर्धारण किया है—

आयुर्धर्मयशोवृद्धिः धनधान्य फलं लभेत्।
रागाभिवृद्धि सन्तानं पूर्णभगाः प्रगीयते॥

अर्थात आयु, धर्म, यश, वृद्धि, संतान की अभिवृद्धि, धन-धान्य, फल-लाभ इत्यादि के लिए रागों का पूर्ण गायन करना चाहिए। वेदों में संगीत को मोक्ष प्राप्ति का सर्वोत्कृष्ट साधन माना गया है।

ऋग्वेद में 'गाथपति' नामक चिकित्सक का उल्लेख है, जिसका तात्पर्य संगीत चिकित्सक से है। सामवेद में, जो भारतीय संगीत का वेद माना जाता है, रोग-निवारण के लिए राग गायन का विधान मिलता है। अथर्ववेद में ऋक्, यजुष् और साम के ऐसे मंत्र थे, जो जीवन से, व्यवहार से और स्वास्थ्य से संबंधित थे।

ब्रह्मरत्न विशेषज्ञ, संगीतज्ञ एवं वैद्य सभी के गुणों को धारण करता था। यज्ञों के माध्यम से शारीरिक, मानसिक व व्यावहारिक रूप से संतुलित रहने का प्रावधान था। मंत्र, मणि एवं औषधि, तीनों के द्वारा अथर्ववेद में उपचार बताया गया है। मंत्र-संगीत (साम), रत्नमणी तथा औषधि ने आगे चलकर आयुर्वेद का रूप धारण किया।

आयुर्वेद में देह धारण की तीन धातुएँ बताई गई हैं—वात, पित्त और कफ। अतः इन तीनों धातुओं का संतुलन बनाए रखने के लिए शब्द शक्ति, मंत्र शक्ति और गायन शक्ति का भी प्रयोग होता रहा है। ऋषि-मुनियों द्वारा संगीत व मंत्र-साधना **ओऽम्** द्वारा अनेक प्रकार की सिद्धियों व चमत्कारों पर अधिकार प्राप्त करना संगीत के प्रभाव का बोध कराता है।

संगीत ऋषि तुंबरू को प्रथम संगीत चिकित्सक माना जाता है। उन्होंने अपनी पुस्तक 'संगीत

स्वरामृत' में उल्लेख किया है कि ऊँची और असमान ध्वनि का वात पर, गंभीर व स्थिर ध्वनि का पित्त पर तथा कोमल व मृदु ध्वनियों का कफ के गुणों पर प्रभाव पड़ता है।

यदि सांगीतिक ध्वनियों द्वारा इन तीनों को संतुलित कर लिया जाए तो बीमारियों की संभावनाएँ ही समाप्त हो जाएँगी।

योग के सिद्धांत के अनुसार श्वासों से जुड़ना अंतर्मन से जुड़ना है और व्यक्ति जब अंतर्मन से जुड़ जाता है तो ऋणात्मक संवेग कम हो जाता है और धनात्मक संवेग स्थायी होने लगते हैं। ये धनात्मक संवेग व्यक्ति को मनोविकारों से दूर रखते हैं। मान्यता है कि समुद्रगुप्त जब वीणा वादन करते थे तो उनके उपवन में वसंत ऋतु का आभास होता था।

संगीत द्वारा पेड़-पौधों को रोगग्रस्त होने से बचाया जा सकता है। बहेलियों के बीन तथा सपेरे के बीन बजाने पर मृग व सर्प मोहित हो जाते हैं। कनाडा में संगीत सुनाकर गायों से अधिक दूध प्राप्त किया जाता है।

विभिन्न रोगों के लिए संगीतज्ञों एवं संगीत चिकित्सकों तथा मनोवैज्ञानिकों ने कुछ राग निश्चित किए हैं, जो उन रोगों को दूर करने में सहायक सिद्ध हुए हैं। ऐसे कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

हृदय रोग—इस रोग में राग दरबारी व राग सारंग से संबंधित संगीत सुनना लाभदायक है।

अनिद्रा—यह रोग हमारे जीवन में होने वाले सबसे साधारण रोगों में से एक है। इस रोग के होने पर राग भैरवी व राग सोहनी सुनना लाभकारी होता है।

अम्लता—इस रोग के होने पर राग खमाज सुनने से लाभ मिलता है।

कमजोरी—यह रोग शारीरिक शक्तिहीनता से संबंधित है। इस रोग से पीड़ित व्यक्ति कुछ भी काम कर पाने में खुद को असमर्थ महसूस करता है। इस रोग के होने पर राग जयजयवंती सुनना या गाना लाभदायक होता है।

स्मरणक्षमता—जिन लोगों की याददाश्त कम हो या कम हो रही हो, उन्हें राग शिवरंजनी सुनने से बहुत लाभ मिलता है।

खून की कमी—इस रोग से पीड़ित होने पर व्यक्ति का चेहरा निस्तेज व सूखा-सा रहता है। स्वभाव में भी चिड़चिड़ापन होता है। ऐसे में राग पीलू से संबंधित गीत सुनने से लाभ पाया जा सकता है।

मनोरोग अथवा डिप्रेशन—इस रोग में राग बिहाग व राग मधुवंती सुनना लाभदायक होता है।

रक्तचाप—ऊँचे रक्तचाप में धीमी गति और निम्न रक्तचाप में तीव्र गति का गीत- संगीत लाभ

प्रत्येक दिवस नया अनुभव करना ही यौवन की पहचान है।

देता है। शास्त्रीय रागों में राग भूपाली को विलंबित व तीव्र गति से सुना या गाया जा सकता है।

अस्थमा—इस रोग में आस्था-भक्ति पर आधारित गीत-संगीत सुनने व गाने से लाभ होता है। राग मालकोस व राग ललित से संबंधित गीत इस रोग में सुने जा सकते हैं।

सिरदरद—इस रोग के होने पर राग भैरव सुनना लाभदायक होता है।

इस प्रकार विभिन्न प्रकार के रागों से रोगों की चिकित्सा संभव है। हमें भी अपनी पसंद के अनुरूप संगीत का चयन करना चाहिए। इससे मन शांत एवं संतुलित होता है। संगीत हमारी चेतना का विकास भी करता है। अतः मानवीय चेतना के परिष्कार, परिमार्जन एवं विकास के लिए भारतीय शास्त्रीय संगीत का प्रयोग करना चाहिए। ❑

ईश्वर समर्पण

हम सब दु:खी मनुष्य हैं, परंतु अपने इस दु:ख को पहचानना नहीं चाहते—यही अज्ञान है। दु:ख इस बात का नहीं कि हमें संसार से कुछ मिला नहीं या हमारा कोई प्रयोजन पूरा नहीं हो पाया। दु:ख इस बात का कि ईश्वरीय धरोहर को पूर्णरूप से उत्सर्ग के मार्ग पर हम नहीं लगा पाए। इसके लिए क्या करना पड़ेगा, सर्वप्रथम तो यह मानना पड़ेगा कि वास्तव में दु:ख है।

उस दु:ख का कारण बाहर भौतिक नहीं, बल्कि हमारे अंत:करण में विद्यमान है। उसे जिसने सुलझा लिया वह कभी भी स्वयं को बाह्य घटनाओं के परवश नहीं स्वीकारता है। उसे तो परमात्मा का प्रकाश सहज ही प्राप्त होता है, यही उसकी नियति है। जिसके पास अपने अंत:करण के शोधन की नीति है—जीवन की परिस्थितियों को सुलझाने और अपने मार्ग पर बढ़ चलने का साहस भी उसे ही प्राप्त होता है।

यदि हम अपनी आत्मप्रेरणा से विमुख नहीं हैं तो हमें सच्ची शांति के दर्शन हो चुके हैं एवं अब हमारा जीवन किसी प्रकार के चाल-चलन से परे है तो समझना चाहिए कि ईश्वर की महान अनुकंपा हम पर हुई है। इससे बढ़कर कुछ नहीं हो सकता है, हृदय की दिव्य भावना का उजागर होना एवं उससे जीवन के कायाकल्प की दिशा में बढ़ना, यही तो ईश्वरीय विधान है। जो इसे समझ गया उसे अपनी आत्मा में उस संभावना के जन्म का उदय दिखाई देता है, जिसे देवत्व का जागरण एवं मानव मर्यादा का उद्घोष कहा जा सके।

हम सब को अपनी आत्मप्रेरणा को समझना आना चाहिए कि वह क्या कहती है। क्या भौतिक संसार उसे प्रिय है या किसी दिव्य प्रयोजन का कार्यान्वयन? क्या आत्मा की सदा रहने वाली सत्ता से उसे प्रीति है या इस संसार के भटकावों एवं कुहासों के मध्य विचलित हो जाने से?

हमें यह समझना चाहिए कि हमारे भीतर एक महान धरोहर का वास है। वह है अंत:करण की प्यास और ईश्वरीय विधान अनुसार चल पड़ने का नीति-व्यवहार। जो ऐसा कर सका उसका जीवन सँवर गया; क्योंकि हृदय में विराजित महान आत्मा ईश्वरीय संसर्ग से पूर्ण मुक्त हो जाती है एवं तब उसका प्रकाश जीवन की सभी गतिविधियों में, एकता के सूत्र से देदीप्यमान होता दिखाई देता है।

अपने अंत:करण की शुभ संभावना को प्राप्त करना ही हमारा प्रथम कर्त्तव्य है। उसके बाद तो मनुष्य को मात्र अपने आत्मारोहण के पथ पर चलना होता है। उसे किसी दूरस्थ केंद्र से स्वत: ही प्रेरणा-प्रोत्साहन मिलने लगते हैं, हृदय के सभी विषय-विकार जलकर भस्म हो जाते हैं एवं तब वह साधारण नहीं, असाधारण प्रतिभा का धनी कहलाता है।

इसके लिए पूर्ण रूप से जाग्रत होना सीखिए, यह देखिए कि ऐसी कौन-सी बातें हैं, जिन्होंने हमें जकड़ रखा है। हम कहाँ जाएँ, जो आवश्यक समाधान प्राप्त कर सकें। हमें तो एकमात्र ईश्वर चाहिए, जो कि प्रत्येक हृदय के भीतर बैठा महान उत्कर्ष का प्रार्थी है। जब तक हमारा अंत:करण इस सत्य को नहीं स्वीकारता कि हमारा जन्म एक दिव्य प्रयोजन के लिए हुआ है, तब तक आंतरिक व्याकुलता हमें क्षुब्ध करती रहती है। इसे स्वीकारने के अतिरिक्त एक और चाहत आवश्यक है और वह है पूर्ण उत्सर्ग की प्रार्थना एवं सभी प्रकार के विषय-व्यापारों से मुक्ति का आत्मभाव।

जब तक अंत:करण इतना शुद्ध नहीं हो जाए कि प्रत्येक प्रयोजन हेतु ईश्वरीय गुण-गरिमा का ध्यान रहे, आत्मा सदा एकरस अपने स्रोत से जा मिलने को तत्पर खड़ी दिखाई दे तथा हमें जीवन का स्वरूप व्यक्तिगत सुख-स्वार्थ से बढ़कर समष्टि के हित जा लगने में प्रतीत हो—तभी यह संभव है कि हृदय की प्रेरणा ईश्वरीय नवविधान अनुसार चलने को अग्रसर दिखाई पड़े।

मनुष्य का चित्त पूर्णत: विगलित होकर उसे उस महान सौभाग्य की प्राप्ति कराता है, जिसे कि ईश्वरीय अनुकंपा एवं ज्ञान के अमृत-सागर से मिलन कहा जा सके। जब तक हम अपनी आत्मचेतना से विमुख हुए बैठे हैं, हमें प्रकाश का दिव्य-केंद्र पता नहीं तथा हमारा जीवन सेवा-उत्कर्ष की उमंगों से परिपूर्ण नहीं—तब तक यह संभव भी नहीं कि मनुष्य की आत्मा उसे पूर्ण परिष्कृत होने का अवसर दे सके।

ऐसा तब होता है, जब हमारा मन एकत्वदर्शी एवं समतापरायण हो जाए। उसे विषयों का भ्रमजाल कभी भी अपनी केंद्रीय धरोहर से विमुख न करे एवं तब मनुष्य का स्वरूप एक अत्यंत ही उज्ज्वल गति को प्राप्त करता है। वह है कषाय-कल्मषों से मुक्ति एवं हर प्रकार की दुविधा-समस्या का अंत। जब हम ऐसा करने में समर्थ हो जाएँगे तो ही जीवन सदा निश्चिंत एवं प्रेरणा से ओत-प्रोत दिखाई देगा। इसे ही चमत्कार या ईश्वरीय आदेश का प्रतिवहन कहेंगे एवं फिर मनुष्य जागरूक हो इस धरती पर विचरण का अधिकारी बनता है।

दु:ख का केंद्र-बिंदु है अंत:करण का विषयों से ग्रस्त रहना, जब यह उबर जाए तो समझना चाहिए कि हमने ईश्वरीय प्रकाश के साहचर्य में रहना सीख लिया है—उसे ही ईश्वर समर्पण का पर्याय कहेंगे। ❑

पत्रिका रजिस्टर्ड मँगाएँ

डाक-अव्यवस्था के कारण प्राय: अखण्ड ज्योति न मिलने की शिकायत बनी रहती है। अत: सदस्यों की सुविधा के लिए रु. 240/—वार्षिक (20/—प्रतिमाह) शुल्क अतिरिक्त भेजने पर रजिस्टर्ड डाक से भेजने की व्यवस्था जनवरी—2025 से प्रारंभ की जा रही है।

जो सदस्य इस सुविधा का लाभ उठाना चाहें, वे अपना पूरा नाम, पता, सदस्यता क्रमांक, मोबाइल नंबर सहित रु. 240/—(रु. 20/—मासिक) अतिरिक्त भेजकर सूचना अवश्य दें। यह सुविधा वार्षिक सदस्य, बीसवर्षीय सदस्य एवं 2 से 14 तक इकट्ठी पत्रिका मँगाने वालों के लिए उपलब्ध है।

2 से 14 तक पत्रिका मँगाने वालों को भी मात्र रु. 240/— (20/—प्रतिमाह) ही देना होगा।

आत्मशक्ति के पर्याय भगवान हनुमान

जिस पर भगवान राम की कृपा हो, वह कभी रुक नहीं सकता है। यह तथ्य हमें बताता है कि राम कितने बड़े हैं और हम उन्हें कितना छोटा मान बैठते हैं।

हनुमान जी कौन हैं? वो जो भगवान राम के प्रति अनुग्रहीत हैं, उनसे ही प्रेरित जिनके क्रियाकलाप हैं। भगवान राम हैं सदा संगी और हनुमान जी हैं उनके भक्त। यदि भगवान राम को हनुमान मिल जाएँ तो एक अद्‌भुत संयोग की स्थापना होती है—वह यह कि भगवान राम की चेतना अपने आदर्श पात्र के साथ वह भूमिका निभाने लगती है जिसे कि विशेष कहा जा सके।

इसमें आत्मा अपने स्रोत से जुड़ी हुई सदा एकरस एवं अपने पथ पर अविचलित रूप से चलने में समर्थ होती है। इसे ही आत्मप्रज्ञा कहते हैं। जिसके पास यह है, वह कभी भी स्वयं को संसार के झंझावातों के मध्य अवरुद्ध नहीं स्वीकार सकता है।

उसकी चेतना कहेगी कि दु:ख से ऊपर उठना सीखो, दु:ख एक माध्यम है चेतना के उच्चतर जागरण का—इसके बाद स्वयं से यह पूछना चाहिए कि आदर्श पथ पर बढ़ने की ठानी है कि नहीं।

यह समझना जरूरी है कि मेरी चेतना में आत्मा का प्रकाश स्वत: ही प्रस्फुटित होता है, यदि उसे दोष-दुर्गुणों से, हृदय की ग्रंथियों से न ढका जाए। आत्मा महान है इसमें थोड़ा भी संदेह नहीं, परंतु जिस चित्त पर संसार के पीड़ा-मोह के संस्कार पड़े हों उसे विकसित करने के लिए एकमात्र उपाय है, स्वयं की शक्ति पर विश्वास। इस आत्मशक्ति के पर्याय ही हनुमान जी हैं।

हनुमान जी उस चेतना का नाम है, जो हम सब में जाग्रत हो एक अद्‌भुत संयोग की स्थापना करती है। वह चेतना आत्मा को पूर्णरूप से मुक्त कराती है एवं अपनी जाग्रति की दिशा में बढाती है। जो यह समझ गया कि मैं राम का प्रतिनिधि हूँ, जो कि आत्मा का स्वरूप हैं, उसे फिर इस संसार की चिंता करने की आवश्यकता नहीं रह जाती है।

भगवान राम सच में मनुष्य के भीतर की हर समस्या, उसके पथ के प्रत्येक अवरोध को मिटा देने की सामर्थ्य रखते हैं, परंतु उन्हें चाहिए एक हनुमान जी—जो उनके बताए पथ पर चले एवं महान परिणाम उपस्थित करे।

भगवान राम कौन हैं? एक सशक्त चेतना, जिनके बल पर जीवन की हर समस्या का समाधान किया जा सकता है और हनुमान जी हैं उनके प्रतिनिधि अर्थात हनुमान जी हुए आप और हम; यदि हम अपने वास्तविक मूल्य को पहचान लें।

हनुमान जी के बिना जीवन पूर्ण नहीं होता है, हनुमान जी उस आकांक्षा के प्रतिरूप हैं, जो सदैव भगवान राम के पथ पर चलने के लिए हमारे हृदय में मचलनी चाहिए। भगवान राम हैं आत्मा और आप हैं आत्मा के संगी यानी आप उस आत्मा के वाहन के रूप में कार्य करने के इच्छुक हैं।

भगवान राम को अपने से दूर न करें और हनुमान जी जैसा व्यक्तित्व बनाने की दिशा में बढ़ें। हनुमान जी वे ही हैं; जिन्होंने लंका जला दी; अनेकों राक्षसों का वध किया; सीता को घर लाने में सफल हुए तथा एक आदर्श पात्र कहलाए। हम भी भगवान राम के सेवक कैसे बनेंगे—अपनी आत्मा

को जगाकर उससे हर प्रकार के आसक्ति-विकार से परे होकर। यदि हम ऐसा कर सके तो भगवान राम का आशीर्वाद एवं दैवी कृपा हमारे साथ चल पड़ेगी।

हम अपने को उस योग्य मान सकेंगे, जिसमें कि आत्मा सदैव अपने उच्च दृष्टिकोण से कार्यरत हो कर्त्तव्य की दिशा में आगे बढ़ती है। आत्मा का कर्त्तव्य क्या है? स्वयं की पूर्ण जाग्रति एवं इस संसार का कल्याण। जिसके पास यह है वह भटकता नहीं, भगवान राम का कार्य करने को ही उसकी चेतना लालायित रहती है। भगवान राम से बढ़कर इस संसार में कुछ भी नहीं। आप भगवान राम को अपने भीतर समा लीजिए, फिर देखिए कैसे चमत्कार घटित होता है।

भगवान राम वे हैं जो हमारे हृदय में बसकर सदा कल्याण का पथ प्रशस्त करते हैं। उनकी उपस्थिति में कुछ भी अशुभ नहीं हो सकता है, राम हम सभी की साझी धरोहर हैं।

भगवान राम को जिसने समझा है, वह परिवर्तित हुए बिना नहीं रहा, राम के द्वारा ही हनुमान में जाग्रति आई एवं उन्होंने अपने आप को उस अनुरूप बनाया, जिसे अद्भुत एवं महान कहा जा सके।

हनुमान जी हमारे भीतर की वह चेतना हैं जो कहती है कि तू भगवान के लिए ही बना है, अपने उत्तराधिकार को पूरा कर, उनके साथ ही चल पड़। जब भगवान रहेंगे तो चेतना अपने बंधनों से मुक्त हो सदा कल्याण का पथ प्रशस्त करेगी। उसे किसी प्रकार की चिंता या दुविधा नहीं सताएगी, यही भगवान राम का प्रभाव है।

आप उसे ग्रहण करें तो समझ सकेंगे भगवान के सामीप्य से मनुष्य अपने आप को पूर्ण विकसित करने में समर्थ होता है। इसे ही जीवन-जाग्रति कहते हैं। जो यह समझ गया कि इस जीवन का यथार्थ स्वरूप चेतना की ऊँचाई में है तथा इसे सुविकसित करने के लिए हमारे ही हृदय की आवाज उठनी चाहिए, उसके लिए आत्मप्रतिष्ठा दुष्प्राप्य नहीं रह जाती है। आत्मा की अमर ज्योति को ही प्राप्त करने मनुष्य के कदम उठा करते हैं। यह तो भ्रम और अज्ञान है कि उसने इस संसार को सत्य मान लिया और इसके पीछे की चेतना से वह अनभिज्ञ है।

इसी को भगवान राम का हनुमान जी से विलगाव कहेंगे, भगवान राम यदि हमारे हृदय में हैं तो हनुमान जी के अवतरित होते देर नहीं लगती। जब हनुमान जी हमारे भीतर प्रवेश कर जाएँगे तो उनके द्वारा सच में हमारा जीवन परिवर्तन का साक्षी बनेगा। हनुमान जी हमारी एक जाग्रत आत्मचेतना के प्रतीक हैं। ❑

अपने आप को खरा रखो। अंतर को टटोलो। देखो कि उसमें खोट तो छिपा हुआ नहीं है। चिनगारी छोटी होने पर भी अवसर पाकर प्रचंड ज्वाला बन सकती है। अपनी ही कमियाँ चिंतन, चरित्र और व्यवहार को गर्हित बनाती हैं। प्रकाश की ओर पीठ करके चलने वाला अपनी काली परछाईं ही देखता है। आदर्शों से विमुख होकर कोई व्यक्ति न तो गरिमा अर्जित करता है और न ओछे उपायों से प्राप्त की गई ख्याति को बनाए रह सकता है।

—परमपूज्य गुरुदेव

कर्मों की अभिव्यक्ति है भाग्य

चलते रहने से ही व्यक्ति मंजिल तक पहुँच पाता है। भाग्य के भरोसे बैठे रहने से मंजिल तक नहीं पहुँचा जा सकता है। इसलिए भाग्य को नहीं, कर्म को प्रधान कहा गया है। कठोर परिश्रम और पुरुषार्थ के द्वारा ही हम जीवन में सफल और सुखी हो सकते हैं।

परिश्रम और पुरुषार्थ करने के बजाय आलसी, प्रमादी, अकर्मण्य और निष्क्रिय बने रहने और भाग्य के भरोसे बैठे रहने वाले लोगों को जीवन में निराशा और असफलता ही हाथ लगती है। अस्तु हमें सदैव सच्चाई और पुरुषार्थ के पथ पर सक्रिय रहना चाहिए और चलते रहना चाहिए; क्योंकि कर्मरूपी पथ पर चलते रहने से ही मंजिल प्राप्त होती है।

समस्त शास्त्रों में कर्म को ही प्रधानता दी गई है, कर्म करने को ही महत्त्वपूर्ण माना गया है। गीता में भगवान कृष्ण ने अर्जुन को कर्म करने, युद्ध करने, स्वधर्मपालन करने का ही उपदेश दिया है। भगवान ने अर्जुन से कहा कि कुरुक्षेत्र की रणभूमि में अभी युद्ध करना ही तुम्हारा धर्म है, कर्म है। तुम कर्मरूपी धर्म का पालन करो। तुम युद्ध करो अर्थात कर्म करो, पर युद्ध के परिणाम की चिंता, अपने कर्म के फल की चिंता न करो। तुम सिर्फ कर्म करो और अपने कर्मों को मुझे अर्पित करते रहो।

कर्म भाग्य के अधीन नहीं, बल्कि भाग्य कर्म के अधीन है। हाथ की लकीरों में अपने भाग्य को ढूँढ़ने के बजाय अगर हम हाथों से कर्म करें, पुरुषार्थ करें तो हम जो कुछ चाहें, वह प्राप्त कर सकते हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में कर्म को ही प्रधान कहा है—

करम प्रधान बिस्व करि राखा।
जो जस करइ सो तस फलु चाखा॥
सकल पदारथ हैं जग माहीं।
कर्महीन नर पावत नाहीं॥

अर्थात गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं कि विश्व में कर्म को ही प्रधान कर रखा है। जो जैसा कर्म करता है, वह वैसा ही फल भोगता है। इस संसार में हर वस्तु उपलब्ध है और हम जो भी पाना चाहें उसे कर्म करके, पुरुषार्थ करके प्राप्त कर सकते हैं, पर जो कर्महीन हैं अर्थात जो कर्म नहीं करते, प्रयास-पुरुषार्थ नहीं करते वे उसे प्राप्त नहीं कर पाते।

नीतिशास्त्र में भी कहा गया है—

'न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः।'

अर्थात अगर सिंह शिकार करने न जाए और सोया रहे तो मृग स्वयं ही उसके मुख में नहीं चला जाएगा। सिंह को यदि भूख मिटानी है तो उसे आलस्य त्यागकर मृग का शिकार करना ही होगा। उसी प्रकार हमें जीवन में जो कुछ पाना है उसके लिए हमें तदनुरूप कर्म, प्रयास, पुरुषार्थ करना ही होगा, पर इसके साथ ही महत्त्वपूर्ण यह भी है कि हमारा प्रयास सही दिशा में होना चाहिए, सफलतारूपी साध्य की प्राप्ति के लिए साधन भी पवित्र होना चाहिए। शुभ कर्म ही शुभ परिणाम दे सकता है और अशुभ कर्म हमेशा अशुभ परिणाम ही लेकर आता है। जैसे बबूल बोने पर बबूल ही प्राप्त होता है और आम बोने पर आम ही प्राप्त होता है।

शुभ कर्म करना बहुत अच्छा है, पर शुभ कर्म का जन्म भी शुभ विचारों से ही होता है। इसलिए हमें

अपने अंत:करण को शुभ विचारों, उच्च विचारों और उच्चतम आदर्शों से भर लेना चाहिए, क्योंकि उन्हीं से महान कार्यों का जन्म होगा। हाँ, हमें किसी कार्य में कभी असफलता भी मिल सकती है, पर इसका अर्थ यह नहीं कि हमारे भाग्य में सफलता नहीं लिखी है। हमें बार-बार प्रयास करते रहना चाहिए; क्योंकि हमें कभी-न-कभी सफलता मिलेगी ही।

इस संदर्भ में परमपूज्य गुरुदेव ने बड़ा सटीक और सुंदर कहा है कि असफलता मिलने का अर्थ भाग्य खराब होना नहीं है, बल्कि असफलता का अर्थ मात्र इतना ही है कि सफलता का प्रयास पूरे मन से नहीं हुआ। अस्तु हमें तन-मन-प्राण की समस्त ऊर्जा के साथ अपना कर्म, प्रयास, पुरुषार्थ सफलता मिलने तक करते ही रहना चाहिए। हमें एक-न-एक दिन सफलता अवश्य मिलेगी।

हमारे सुख और दु:ख का आधार हमारा कर्म ही हैं। शुभ कर्म से सुख की उत्पत्ति होती है और अशुभ कर्म, बुरे कर्म से दु:ख की उत्पत्ति होती है। सुख प्राप्ति के लिए हमें सदैव शुभ कर्म, पुण्य कर्म, अच्छे कर्म करते रहना चाहिए। अंतत: हमारे कर्मों का परिणाम ही प्रारब्ध अर्थात भाग्य के रूप में हमारे जीवन में प्रकट होता है।

अच्छे कर्मों से सुखद और अच्छे प्रारब्ध, भाग्य का निर्माण होता है, वहीं बुरे कर्मों से दु:खद और बुरे प्रारब्ध और भाग्य का निर्माण होता है। जीवन में मिलने वाले सुख-दु:ख व कर्म और भाग्य के विषय में स्वामी विवेकानंद ने कहा है कि हम वर्तमान में सुख या दु:ख जिस किसी भी स्थिति में हैं, वह हमारे द्वारा अतीत में किए गए कर्मों का ही परिणाम है और भविष्य में हम सुख या दु:ख जिस किसी भी स्थिति में होंगे, वह भी हमारे द्वारा वर्तमान में किए जा रहे कर्मों का ही परिणाम होगा; क्योंकि भाग्य कुछ और नहीं, बल्कि हमारे कर्मों का ही प्रकटीकरण है।

वे आगे कहते हैं कि भाग्य हमारे ही कर्मों की अभिव्यक्ति है। सफलता प्राप्त करने के लिए सतत प्रयत्न और अदम्य इच्छा रखो। प्रयत्नशील व्यक्ति कहता है मैं समुद्र पी जाऊँगा, मेरी इच्छा से पर्वत टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा। इस प्रकार की शक्ति और इच्छा रखो, कड़ा परिश्रम करो तो तुम अपने उद्देश्य को निश्चित पा जाओगे और हमारे लिए उपनिषद् का भी यही आदेश है, संदेश है कि **'उतिष्ठत, जाग्रत, प्राप्य वरान्निबोधत'** अर्थात उठो, जागो और तब तक मत रुको, जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाए। ❑

इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति
न चेदिहावेदीन्महती विनष्टि:।
भूतेषु भूतेषु विचित्य धीरा:
प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति॥

—केनोपनिषद्-2/5

अर्थात यदि मनुष्य ने इसी जन्म में अपने सच्चे स्वरूप को जान लिया तब तो ठीक है। यदि नहीं जान पाता है तो इसकी बहुत बड़ी हानि है; क्योंकि जब तक उसे आत्मस्वरूप का ज्ञान नहीं होगा, तब तक उसके दु:खों का अंत नहीं होगा। इस प्रकार वह आजीवन दु:खी ही रहेगा।

जीवन की परिभाषा है माँ

या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥

'माँ' 'भू' 'ॐ' आदि एक अक्षर वाले शब्द हैं, किंतु उनके अभिप्राय, उनके अर्थ, उनके मतलब इतने गहन, इतने अहम, इतने ऊँचे और इतने विशाल हैं कि उन्हें शब्दों में नहीं बाँधा जा सकता है। वे शब्दातीत हैं, कल्पनातीत हैं। यथा अक्षर ॐ 'अ' 'ॐ' 'म्' से निर्मित है, जिसका निहितार्थ है अनंत ऊर्जामंडित, भू अर्थात पृथ्वी, धरा-क्षिति-भूमि ठीक ऐसे ही माँ के म में आ की मात्रा, 'माँ' जिसका तात्पर्य 'मन', 'ममता' और 'आ' का अर्थ है आह्लाद, स्नेह, प्रेम अर्थात माँ एक ऐसा स्वरूप, एक ऐसा रिश्ता, एक ऐसा चरित्र, एक ऐसा पात्र है; जिसका मन आह्लाद से भरा हो जिसकी ममता आह्लादित हो।

चूँकि मन और आह्लाद अपरिमित हैं, अनंत हैं इसलिए माँ बेजोड़ एवं अद्भुत है। आकार में लघु है, किंतु क्रियान्वयन में असीम है, विराट है। वैसे तो माँ अलौकिक भी है, वर्णनातीत भी है, किंतु चूँकि हम लौकिक हैं, इसलिए परिवार के लिए महत्त्वपूर्ण भूमिका उसी के द्वारा संपादित होती है। जिसके बिना परिवार साकार नहीं होता ऐसी माँ, ऐसी जननी, ऐसी शाश्वतस्वरूपा नारी रूप चाहे कामकाजी हो या गृहिणी, को कभी हम विस्मृत नहीं कर सकते।

माँ परिवार का अविभाज्य अंग है। माँ की चाहत अपने पुत्र-पुत्रियों पर सदैव समान होती है, न किसी पर कम न ज्यादा, किंतु परिवार के हर सदस्य को ऐसा महसूस होता है, ऐसा लगता है कि माँ सबसे अधिक उसे ही चाहती है। पिता चाहे कितने ही अच्छे क्यों न हों, संतानें पिता की तुलना में माँ के ज्यादा निकट होती हैं।

माँ के विषय में यह कितना सार्थक सत्य है कि हर शिशु की पहली गुरु माता ही होती है। बच्चों का पहला संवाद भी माँ से ही होता है। बच्चा पहला शब्द भी 'माँ' कहकर पुकारता है और बच्चे का सर्वाधिक सान्निध्य भी माँ के साथ ही होता है। माँ अपने शिशु को संस्कार देती है। आरंभिक शिक्षा देती है; उसका भरण-पोषण किशोर होने तक करती है और बच्चियाँ तो सब कुछ माँ से ही सीखती हैं और तब तक सीखती हैं, जब तक वे विवाहित होकर विदा नहीं हो जाती हैं।

क्षीराश्रितंजलं क्षीरमेव भवति।

— चाणक्य सूत्र

अर्थात दूध का आश्रय लेने वाला पानी भी दूध के समान ही हो जाता है।

माँ बच्चे-बच्चियों के बहुत करीब होती है, इसलिए माँ को उनकी पसंद-नापसंद का भी भली भाँति पता होता है। माँ चाहे पढ़ी-लिखी हो या अनपढ़, वह संतानों को हमेशा श्रेष्ठ बनाने में ही जुटी रहती है। इतिहास गवाह है कि माँ ने सदैव ही अपने बच्चों को सही राह दिखाई। इसीलिए कहा गया है कि 'पुत्रो कुपुत्रो भवति, माता कुमाता न भवति' अर्थात एक बार संतानें गलत मार्ग पर जा सकती हैं पर माँ कभी कुमार्ग पर नहीं जाती, कुमाता नहीं होती। चाहे पौराणिक समय रहा हो

या आधुनिक-माँ-में-माँ ही दिखी। यदि किसी विशेष माँ का उदाहरण दिया जाए तो अन्य माताओं के साथ अन्याय होगा; क्योंकि सारी माताएँ ही विशेष होती हैं।

माँ एक ऐसा शब्द है, एक ऐसा अक्षर, जिसमें ममता उमड़ती है और स्नेह रिसता है। माँ के गुण भी असीमित हैं, उसे कुछ या एक गुण में परिभाषित नहीं किया जा सकता है। माँ की गोद, माँ के आँचल में वे समस्त सुख हैं, जो इस लौकिक संसार में हैं। माँ के बिना शिशु की और शिशु के बिना माँ की तो कल्पना ही नहीं की जा सकती है।

ऐसे ही बिना माँ के परिवार के विषय में सोचना भी संभव नहीं है। माँ को और माँ के मनोविज्ञान को जानना-समझना लगभग असंभव है। माँ प्रकृति की, परमपिता परमेश्वर की प्राणियों के लिए एक अद्‌भुत, अप्रतिम व अलौकिक उपहार है, देन है।

माँ शास्त्रसम्मत है, माँ ज्ञान-विज्ञानसम्मत है। माँ अध्यात्म है, विचार है, निराकार भी है और साकार भी। माँ पूजनीय है, वंदनीय है, अभिवंदनीय है। माँ संप्रदाय, समुदाय व सांसारिकता से परे हैं। माँ के विषय में, माँ की महिमा के बारे में बखान करना अर्थात अथाह समुद्र की जल-राशि में से कुछ बूँदें निकालना है।

मनुष्य या प्राणी पितृऋण से भले ही उऋण हो जाए, मातृऋण से उऋण होना संभव नहीं। इसीलिए कहा गया है कि **जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।** माँ के विषय में कवियों, शायरों, साहित्यकारों ने भी बहुत लिखा है। यहाँ यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि माँ के मंदिर सदैव शिखरों पर ही होते हैं। माँ गंगे, माँ भारती, मातृभूमि, हमारी हम सबकी अस्मिता है, पहचान है। माँ ही संसार है, माँ ही जीवन है। माँ ही हमारे जीवन को परिभाषित करती है। माँ हमारे हृदय में संवेदना का सजल भाव प्रवाहित करती है। अत: हमें माँ की सेवा करनी चाहिए। ❑

ब्रह्मर्षि याज्ञवल्क्य, राजा जनक की सभा में विराजमान थे और शंकाओं का समाधान कर रहे थे। राजा जनक ने पूछा—"प्रकाश का स्त्रोत क्या है और वह न मिले तो किसका आश्रय पकड़ा जाए?"

ऋषि याज्ञवल्क्य ने कहा—"सूर्य प्रमुख है। वह न हो तो चंद्रमा, चंद्रमा न हो तो दीपक और यदि दीपक भी न हो तो विज्ञजनों से पूछकर प्रकाश प्राप्त करें।"

राजा जनक ने पूछा—"कोई बताने वाला न दीखे तब?"

ऋषि याज्ञवल्क्य ने कहा—"तब अपने अंत:विवेक के आधार पर मार्ग अपनाएँ। सांसारिक प्रकाश न मिलने पर उसी की ज्योति यथार्थता बताती है।"

मन को मौन करने का विधान

ध्यान एक उच्चस्तरीय विधा है, अपने मन को पवित्र करने के लिए, उससे उभयपक्षीय निर्माण की दिशा में बढ़ने के लिए। जिस चेतना द्वारा ध्यान किया जाता है वह अत्यंत विलक्षण है, उसके लिए शब्द पर्याप्त नहीं हैं।

ध्यान हर प्रकार की व्याधि से मुक्ति का उपाय है, बशर्ते इसे ठीक से किया जाए। सही ध्यान क्या है? जो ओढ़ा हुआ है उसे त्यागना सीखें, बिना आसक्ति के विचरण करने में समर्थ हों। जिसने ध्यान की शक्ति विकसित कर ली, उसे परमात्मा का प्रकाश सहज ही मिला करता है; ध्यान उसे सशक्त बनाता है अपने भीतरी अवयवों को सुगठित करने में तथा उनसे महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम संपादित कराने में।

ध्यान के लिए एकांत चाहिए होता है, परंतु उससे भी अधिक चाहिए होता है मन का मौन होना। मन जिस क्षण मौन हो जाए, समझना चाहिए कि हमने जीवन की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि प्राप्त की है। मन क्या है? संस्कारों का एक झरोखा, जिसके द्वारा मनुष्य किसी भी दिशा में प्रगति करने में समर्थ होता है। मन को कैसा बनाया जाए? ऐसा कि वह हर क्षण अपने आप में संतुष्ट एवं बेफिक्र रहे।

इस संसार की हमें तब तक चिंता करने की आवश्यकता नहीं है, जब तक हम स्वयं में परिपूर्ण न हों तब तक आपको केवल अंतरात्मा का दिव्य अवलंबन चाहिए। उसके बाद शेष संसार आपके लिए क्रीड़ास्थली भर बनकर रह जाता है। ध्यान के लिए आवश्यक स्थान नियत करना चाहिए, परंतु उससे भी महत्त्वपूर्ण है मन का अपने आप में स्थित हो जाना।

जब सभी प्रकार के उद्वेग से मन परे हो जाएगा, अपनी वास्तविक सत्ता में तल्लीन एवं स्पृहा से परे हो जाएगा तो जो कुछ भी मन को बाधित कर रहा होगा, उसे सुविकसित होने से रोक रहा होगा, वह अपने आप विगलित हो जाएगा।

ध्यान अपने आप में एक महान औषधि है, इसके द्वारा मनुष्य किसी भी प्रकार की कठिनाई से पार पा सकता है। ध्यान के बिना जीवन अधूरा है एवं परिपक्व ध्यान इस जीवन की प्रगति का आधार भी है। जब हम ध्यान करते हैं तो समझें कि यह मात्र क्रिया भर नहीं है—इसके पीछे एक गुह्य विज्ञान है। आप उसे समझ जाएँगे तो ध्यान को एक नए ही रूप में स्वीकार सकेंगे।

ध्यान कब करना चाहिए? जब-जब मन व्यर्थ के विषयजालों में स्वयं को खड़ा पाए। ध्यान की उपयोगिता ही यह है कि वह हमें पूर्ण रूप से जागरूक एवं हृदय में संचरित महान ज्योति के दर्शन कराता है। यदि ध्यान अपने चरमोत्कर्ष को प्राप्त करता है तो परमात्मा का साक्षात्कार होता है तथा मनुष्य के विकार संपूर्ण रूप से मिट चलते हैं। इसे ही केंद्रीय आरोहण कहते हैं कि आप ध्यान के योग्य बन पाएँ।

पहले अपनी दिनचर्या को व्यवस्थित करिए, फिर यह देखिए कि कहीं उसमें कोई कमी तो नहीं। ध्यान अंत:ऊर्जा को विकसित करने की कला है। जो ध्यान का हो गया, उसे एकमात्र इस बात की चिंता करनी रह जाती है कि क्या मैंने परमात्मा के प्रति अपने कर्त्तव्य को पूर्ण किया?

यही ध्यान की फलश्रुति है। आप तब तक ध्यान का संपूर्ण लाभ नहीं उठा सकते, जब तक कि ध्यान आपके जीवन को परिवर्तित करने में सफल न हो गया हो। ध्यान का अर्थ ही है, जो अनवरत चले; इसके लिए जीवन को ऐसा बनाइए कि वह सदा दिव्य उद्देश्यों एवं पवित्र कर्मों की दिशा में ही बढ़े।

यदि जीवन महान है तो ध्यान की कोई विशेष उपयोगिता नहीं रह जाती है। ध्यान हमारे अंतरंग में समाहित हो स्वत: ही मुखरित होने लगता है। आप ध्यान को एक प्रक्रियामात्र मत मानिए—यह संपूर्ण जीवनशैली ही है। जिसका जीवन ध्यान नहीं बना, उसने अभी जीना ही नहीं सीखा है।

ध्यान कोई विशेष विधा नहीं, यह तो परमात्मा की वाणी का स्मरण भर है। इसे करने के लिए तैयार हो जाइए, ध्यान की ऊर्जा-रश्मियों से अपने जीवन को महान बनाइए तथा सदा निश्चिंत रहिए कि हम अपने लक्ष्य की दिशा में बढ़ रहे हैं। इसे ही चरितार्थ करने, हमने जन्म लिया है; हम तब तक परिपूर्ण नहीं बन सकते, जब तक आत्मा अपने बंधनों से मुक्त होकर अपने दिव्य उत्तरदायित्व की पूर्ति न करे। वह उत्तरदायित्व यही है कि हम आदर्श मानव बनें, कभी भी भीतर अवस्थित चेतना को बाहर उलझावों में, आत्मप्रताड़ना के द्योतक अनेकानेक क्रियाकलापों में तथा किसी भी ऐसी दिशा में नियोजित न करें, जो कि परमात्मा के विरुद्ध हो।

हमें अपने जीवन को महान आकांक्षाओं से अभिपूरित करना चाहिए। क्षण भर के लिए भी किसी अन्य विषय का स्मरण करना महापाप है। इसके लिए आप पूर्ण तत्पर हो जाइए। परमात्मा से अपनी भावनाओं को एकरूप कर दीजिए, ताकि वह आपके जीवन को सही दिशा दे सके, जो कि उसके लिए अभिप्रेय है।

ध्यान के लिए कोई भी स्थान चुनिए, कैसी भी क्रियाप्रणाली अपनाइए तथा किसी भी नियत-समय का निर्धारण करिए, परंतु स्मरण रखिए कि ध्यान आपकी आत्मा का परमात्मा से वार्त्तालाप है। इसे अपने तक ही सीमित न करें, क्योंकि ध्यान महान उत्सर्ग की प्रार्थना भी है एवं स्वयं को निछावर कर देने का संकल्प भी। इसके बिना जीवन परिपूर्ण नहीं बनता एवं ध्यान ही इसकी महानता का सूत्र है। ❑

एक महात्मा पहाड़ी पर चढ़ रहे थे तो उसी समय एक दसवर्षीय लड़की अपने दो वर्ष के भाई को गोद में लिए पहाड़ी की चढ़ाई चढ़ रही थी।

यह दृश्य देखकर महात्मा ने कहा—"बच्ची, तू इतना भारी बोझ गोद में लिए कैसे चढ़ पाएगी।" लड़की ने तुरंत उत्तर दिया—"बाबा! यह बोझ नहीं, मेरा भाई है।"

वस्तुत: जहाँ प्रेम व भावना होती है, वहाँ कोई काम भारी नहीं होता, अन्यथा भावना न हो तो जीवन ही भारी लगने लगे। सच्ची पारिवारिकता वही है, जहाँ अंत: से उद्भूत भावनिष्ठा ही सर्वोपरि मानी जाती है।

बाहर नहीं, भीतर है संतोष

तीर्थयात्रा से पाप, कष्ट कटते-मिटते हैं। इसलिए तीर्थयात्रा की जाती है कि करने वाले के अंदर यदि कोई दुर्भाव हो तो उसका निवारण हो जाए, मोह नष्ट हो जाए। अंधकार की कहीं क्षीण किरणें भी हों, वे नष्ट हो जाएँ और वहाँ प्रकाश की किरणें जगमगाने लगें। परमात्मा का नाम लेने से इसी उद्देश्य की प्राप्ति होती है।

नाम-संकीर्तन और नाम-महिमा के इस महत्त्व को बहुत कम लोग जान पाते हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने राम-नाम का फल तत्काल बताया। जिन्हें श्रद्धा है, विश्वास है, वे अनुभव कर सकते हैं। परीक्षण की दृष्टि से हम एक बार अपने मन को खूब चंचल बनाएँ और उसमें तम आने दें। उस समय राम शब्द का 5-10 बार उच्चारण करने पर हम देखेंगे कि मन अब पहले जैसा चंचल नहीं होता है। मन में उठने वाली कामनाओं के जाल में कुछ कमी आती है। हम गहराई में उतरते हुए देखते जाते हैं कि तामसिक कामनाओं का, वृत्तियों का जाल कटता चला जा रहा है।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरितमानस के मंगलाचरण में ही व्यक्ति को सावधान कर दिया है कि यदि तुम भगवान के दर्शन चाहते हो तो वह परमात्मा अत्यंत निकट है, जिसके स्वरूप को वेदांत ने स्पष्ट किया है।

भक्त ही परमात्मा को अपने निकट बैठाता है। परमात्मा केवल मंदिरस्थ ही नहीं होता। जिसकी जितनी एकाग्रता जिसके साथ होती चली जाती है, लौकिक जीवन में भी वह व्यक्ति उसे उतना ही प्रिय लगने लगता है। यहाँ तक कि वह उसे हृदयेश्वर कहकर संबोधित करता है।

मंदिरेश्वर परमात्मा तो दूर है, परंतु हृदयेश्वर परमात्मा के दर्शन करना हो तो श्रद्धा आवश्यक है। कभी-कभी शुरू-शुरू में साधक घबरा जाता है कि मुझे ईश्वरदर्शन कैसे होंगे? गोस्वामी जी प्रारंभिक साधक को ही सावधान नहीं करते, सिद्ध को भी सावधान करते हैं; क्योंकि जब कोई सिद्ध बन जाता है, तो वह अपने को विधि-निषेध से अलग मानने लगता है।

समाज उसे देखता है कि इसके आचरण से ऐसा कुछ नहीं मिल रहा है, जो हमारे लिए आचरण योग्य हो। शायद देखने वाला समाज उस सिद्ध से कहीं अच्छा जीवन जी रहा होगा। ऐसे व्यक्ति को देखने के बाद वह अधोमुखी होता है। इसलिए गीता और मानसकार ने साधकों को कुछ नहीं कहा, श्रेष्ठ लोगों को ही कहा।

जैसा श्रेष्ठ पुरुष आचरण करते हैं, समाज के लोग वैसा ही अनुकरण करते हैं। गोस्वामी जी कहते हैं कि सिद्ध होने पर भी व्यक्ति तब तक अपने अंत:स्थित भगवान का दर्शन नहीं कर सकता है, जब तक श्रद्धा और विश्वास नहीं हो। वही परमात्मा हमारे भीतर व बहुत ही निकट है। परमात्मा हमारे हृदय में रहता है, उसका ध्यान करें तो बड़ा आनंद आता है।

दुनिया की सारी वस्तुएँ एक ही व्यक्ति को दे दी जाएँ तब भी उसके लिए पर्याप्त नहीं होंगी। इसलिए जितना मिला है, उसे पर्याप्त मानने की चेष्टा करें। इसका उपाय एक ही है कि विचारपूर्वक

मानें कि जो प्राप्त है, वही बहुत है, वही पर्याप्त है। जो प्राप्त नहीं है, उस स्वप्न-राज्य में घूमेंगे तो मिल पाएगा या नहीं, यह कहना कठिन है।

यदि मिल भी गया, तो उसके उपभोग की सामर्थ्य रखेंगे या नहीं, इसे भी कौन जानता है? आज मनुष्य प्रतिस्पर्धा की दौड़ में किधर भागा जा रहा है?

गाँव से नगर में, नगर से महानगर में, महानगर अच्छे नहीं लगे, तो विदेश प्रवास। विदेश में भी एक देश से दूसरे देश में गया। जिसे धरती पर सुख नहीं मिला तो उसको और कहीं सुख की कल्पना; कैसे सुख दे सकती है?

आज के मानव की स्थिति मृग-मरीचिका जैसी हो गई है। जैसे ग्रीष्मकाल में हिरण को मरुस्थल में झिलमिलाने वाली सूर्य की किरणें पानी की खोज में ले जाती हैं, पर वहाँ भी मरुस्थल ही मिलता है— ठीक वैसी ही स्थिति हमारी हो रही है। हम जैसे भी हैं, जीवन में सत्कर्म की कला सीख जाएँ, तो सुख और दु:ख की परिभाषाएँ बदल जाती हैं। हम जान पाते हैं कि जीवन में सुख क्या है?

जीवन में सुख एवं संतोष स्वयं में है। बाहर नहीं है। अत: हमें सत्कर्म एवं सद्भाव के द्वारा स्वयं के अंदर संतोष पाने का प्रयास करना चाहिए। यही सुख है। ❑

मगध के राजा श्रेणिक भगवान महावीर के परम भक्त थे। उन्होंने राज्य में घोषणा करा रखी थी कि राज्य के जो लोग श्रावक व्रत अपना लेंगे, उनका कर माफ कर दिया जाएगा।

यह सुनकर सभी स्वयं को श्रावक व्रतधारी बताने लगे, जिससे बड़ी समस्या उत्पन्न हो गई। समस्या राजा को बताई गई। राजा ने सच्चे श्रावकों की पहचान के लिए एक योजना बनाई। उन्होंने एक बड़े मैदान में काले व सफेद तंबू लगवाए और घोषणा कराई कि सच्चे श्रावक सफेद तंबू में चले जाएँ और शेष काले तंबू में चले जाएँ।

घोषणा के कुछ देर में ही सफेद तंबू खचाखच भर गया; जबकि काले तंबू में कुछ ही लोग थे। राजा ने काले तंबू में बैठे लोगों को सच्चा श्रावक घोषित कर दिया और उनका कर माफ कर दिया। अन्य लोगों को राजा का यह निर्णय उचित नहीं लगा। उन्होंने राजा से इस संदर्भ में प्रश्न किया तो राजा ने काले तंबू में बैठे लोगों को बुलाया और उनसे पूछा—"वे स्वयं को सच्चा श्रावक क्यों नहीं मानते?"

उन लोगों ने उत्तर दिया—"हम सच्चे मन से श्रावक धर्म का पालन करना चाहते हैं, फिर भी हमसे कोई-न-कोई गलती हो ही जाती है। इसलिए हम स्वयं को सच्चा श्रावक नहीं मानते।" प्रश्न पूछने वालों को भान हो गया कि सच्चा श्रावक आडंबर में नहीं, आचरण में विश्वास रखता है।

महान विद्वान सुब्रह्मण्यम भारती

कुछ पश्चिमी देशों में लेखक का कॉपीराइट निधन के 75 वर्ष बाद खतम हो जाता है। भारत में यह अवधि साठ साल है। इसके अनुसार रवींद्रनाथ टैगोर की रचनाओं पर शांतिनिकेतन का कॉपीराइट 2001 में खतम हो गया, और महात्मा गांधी के सृजन पर नवजीवन प्रेस का नियंत्रण 2008 तक कायम रहा।

पंडित नेहरू के संपूर्ण लेखन का कॉपीराइट मई, 2024 तक उनके परिवार के पास रहा। इस नियम का उत्कृष्ट अपवाद तत्कालीन मद्रास राज्य में दिखा, जब सन् 1949 में मद्रास सरकार ने सुब्रह्मण्यम भारती के संपूर्ण लेखन पर स्वत्वाधिकार (कॉपीराइट) हासिल करने की घोषणा की और 5 साल बाद 'कॉपीराइट' जनता को सौंप दिया, जिससे भारती के रचनाकर्म का बिना किसी कानूनी बाधा के मुद्रण या इस्तेमाल आसान हो गया।

हाल ही में प्रकाशित पुस्तक 'हू ओन्स दैट सांग' में चेन्नई के इतिहासकार एआर वेंकटचलापथी ने साहित्य इतिहास के उन्हीं अद्भुत क्षणों का खुलासा किया है। किताब की शुरुआत सुब्रह्मण्यम भारती के जीवन के प्रसंगों को समेटे एक संक्षिप्त अध्याय से होती है। इसमें दक्षिण तमिलनाडु में पालन-पोषण, पत्रकारिता में उनके शुरुआती प्रयास, उनके अंदर देशभक्ति के उभार, फ्रांस शासित पांडिचेरी में निर्वासन, फिर मद्रास वापसी से लेकर 1921 में महज 38 वर्ष की उम्र में निधन तक को समेटा गया है।

उनके एक प्रकाशक ने 1917 में लिखा—'तमिल भारती को जानते तो हैं, लेकिन उनके असल व्यक्तित्व से कुछ ही वाकिफ हैं। भारती एक महान विद्वान हैं, वे तमिलनाडु के टैगोर हैं और तमिल देश के लिए वरदान।'

भारती का ज्यादातर साहित्य उनके जीवन काल में प्रकाशित नहीं हो सका। उनकी प्रतिभा का असल प्रचार मृत्यु के बाद ही हुआ, जब उनकी पत्नी की पहल पर उनकी तमाम पांडुलिपियों और पुस्तकों का पुनर्प्रकाशन संभव हुआ।

1930 के दशक में भारती के गीत न सिर्फ आमजन की जुबां पर थे और जलसे-जुलूसों, भाषणों में ऊर्जा भर रहे थे, वरन पाठ्यक्रम से लेकर रंगमंच और सिनेमा का भी हिस्सा बन रहे थे। फिल्म निर्माताओं ने तो उनका ऐसा दोहन किया कि भारती की रचनाओं को स्वार्थी इनसानी समूहों के चंगुल से बचाने की मुहिम ही छिड़ गई।

आजादी के कुछ ही दिन बाद अक्टूबर, 1947 में प्रख्यात चिंतक और समाज सुधारक पी जीवानंदम ने आवाज उठाई—'भारती का लेखन आम तमिलों की संपत्ति है, इसलिए तमिल जनता और सरकार को इसे चंद हाथों के चंगुल से मुक्त कराना होगा।' इसे समर्थन मिला और तमिलनाडु के इस अमर कवि के नाम पर व्यापार का विरोध गति लेने लगा।

तत्कालीन मद्रास राज्य के मुख्यमंत्री ओपी रामास्वामी रेड्डियार ने तो भारती-साहित्य का कॉपीराइट हासिल कर उनका संपूर्ण रचनाकर्म आम लोगों के लिए सुलभ बनाने में व्यक्तिगत रुचि दिखाई। भारती भी आंबेडकर की तरह मृत्यु के बाद ज्यादा लोकप्रिय हुए। वे गांधी के करीब दिखते हैं, जब उनकी तमाम सही व्याख्याएँ होती हैं। इनकी व्यापकता बहुत ज्यादा है।

वेकटचलापथी लिखते हैं—'चूँकि भारती आधुनिक तमिल संस्कृति के निर्माण का केंद्रबिंदु

बन चुके हैं, अत: बुद्धिजीवी संसार अपने दायरे में उनकी व्याख्या करना, उन्हें अपने खाँचे में फिट करना चाहता है।'

कल्कि जैसे राष्ट्रवादी लेखक—'महज देशभक्त कवि' कहकर उनके क्रांतिकारी विचारों को दरकिनार करते हैं, तो द्रविड़ आंदोलन से जुड़े भरतिदासन, उनके समाज सुधारक और जाति-विरोधी बातों एवं अँगरेज विरोधी विचारों को दबाते हैं।

सी. राजगोपालाचार्य जैसे परंपरावादी लोगों ने तो उनकी कविताओं में हिंदू तत्त्वों की मौजूदगी के आधार पर उन्हें वैदिक कवि मात्र ठहराने में कसर नहीं छोड़ी। एक प्रकाशन उनकी अनवरत टैगोर से तुलना करता रहा, यह अलग बात है कि भारती स्वयं टैगोर से बहुत प्रभावित थे। दुर्भाग्यवश भारती तमिलनाडु के बाहर उतना नहीं जाने गए, जितना बंगाल के बाहर टैगोर। शायद इसलिए कि भारती का जीवन महज 40 साल रहा और टैगोर 80 साल तक जीवित रहे। वे अप्रतिम देशभक्त थे।

बंगाली बौद्धिक बिना किसी प्रयास के भी बहुभाषी होता है, लेकिन अन्य भाषा-भाषी पिछड़ जाते हैं। यही कारण है कि टैगोर का लेखन और जीवनवृत्त ठीक उसी तरह बंगाल के बाहर देश ही नहीं, दुनिया में भी चर्चित हुआ, जिस तरह बंगाली समाज में। इसका कारण उनके साहित्य का अँगरेजी में अनुवाद और व्यापक प्रसार था।

तमिल मूल के ज्यादातर विद्वान या तो मृतभाषा तमिल में काम करते दिखते हैं या फिर वैश्विक भाषा में। दोनों में समान अधिकार रखने वाले दुर्लभ हैं। असमय मृत्यु के कारण भी टैगोर की तुलना में भारती अपने भाषाई समुदाय के बाहर काफी हद तक अज्ञात रहे।

एक माने में इतिहास ने उनके साथ सदाशयता बरती। शांतिनिकेतन ने टैगोर के कॉपीराइट पर जैसा उत्साह दिखाया, उसने उनके काम का समग्र और रचनात्मक मूल्यांकन भी सीमित किया। दूसरी ओर जैसा कि वेंकटचलापथी लिखते हैं—भारती का रचना संसार बहुत जल्द ही कॉपीराइट से मुक्त हो गया। कलाकारों को नए-नए प्रयोग के साथ उनके गीतों को नए सांगीतिक रूपों में ढालने की छूट मिली।

भारती बड़े फलक पर जाने गए। वेंकटचलापथी हमें इस कहानी के कई पात्रों से मिलाते हैं, जिनमें भारती की पत्नी और बच्चों के साथ ही उनके काम से खुद को मालामाल करने वाले फिल्म निर्माता और राजनेता भी हैं।

'हू ओन्स दैट सांग' पढ़ते हुए लग सकता है कि भारती पर तत्काल एक संपूर्ण बायोग्राफी (जीवनी) की जरूरत है, और शायद एक बायोपिक की भी। इसके सारे गुणसूत्र भी यहाँ मौजूद हैं। एक रचनात्मक प्रतिभा है, उसकी निजी त्रासदियाँ हैं, बीमारी और दवाएँ हैं और है कला भी और भी बहुत कुछ, जो महाकवि भारती को जानने के लिए जरूरी है। ❑

श्रुतं दृष्टं स्पृष्ट स्मृतमपिनृणां ह्लादजननं,
न रत्नं स्त्रीभ्योऽन्यत्क्वचिदपि कृतं लोकपतिना।
तदर्थं धर्मार्थौ विभववरसौख्यानि च ततो,
गृहे लक्ष्म्यो मान्याः सततमबला मानविभवैः॥

अर्थात सुनने से, देखने से, स्पर्श से, स्मरण से जो मनुष्यों को सुख प्रदान करती हैं, ऐसी स्त्री रत्न से अधिक श्रेष्ठ रत्न ब्रह्माजी ने दूसरा नहीं बनाया। धर्म और अर्थ दोनों इसीलिए हैं। वैभव का सुख भी स्त्रियों से है। अतः उनका सदा सत्कार करना चाहिए।

पूज्य गुरुदेव जैसा मैंने देखा-समझा-31

अध्यात्म और विज्ञान का समन्वय

जब से उन्होंने विज्ञान के आधार पर अध्यात्म के प्रतिपादन का विषय हाथ में लिया है और अखण्ड ज्योति में उसकी लेखमाला प्रस्तुत करनी आरंभ की है तब से वैज्ञानिक क्षेत्र में घोर हलचल मची हुई है। विज्ञान सदा अध्यात्म की काट करता रहा है और अध्यात्म ने विज्ञान पर सदा से व्यंग्य कटाक्ष किए हैं। अब तक दोनों में कुत्ता-बिल्ली का-सा बैर रहा है। किसी ने कल्पना तक नहीं की थी कि विज्ञान के आधार पर अध्यात्म का प्रतिपादन संभव हो सकेगा और दोनों को एकदूसरे का पूरक सिद्ध किया जा सकेगा।

ऐसी संभावना तो व्यक्त की जाती थी और आशा रखी जाती थी कि शायद कभी ऐसा प्रतिपादन हो जाए, पर अभी तक संभव नहीं दिखता था, पर जब गुरुदेव ने उसके प्रतिपादन को अपने हाथ में लिया तो चूहे-बिल्ली के विवाह जैसी विसंगति सामने आई।

इस प्रतिपादन पर प्रसन्नता व्यक्त की गई, वहाँ कट्टरपंथियों ने इसका विरोध भी खूब किया, जो हो बात इन्हीं तीन वर्षों में इतना आगे बढ़ गई कि यह प्रतिपादन समस्त विश्व के विचारकों, वैज्ञानिकों और दार्शनिकों के लिए एक अति रोचक चर्चा का विषय बन गया। यह इसी से प्रकट होता है कि केवल इसी विषय को लेकर औसतन 100 से अधिक पत्र प्रतिदिन मथुरा आते थे और तत्संबंधी अनेक जिज्ञासाएँ व्यक्त की जाती थीं। बात और बढ़ी और वह प्रतिपादन चुनौती के स्तर पर जा पहुँचा।

कहा जाने लगा कि तर्क और प्रमाणों की दृष्टि से अपनी बात समझ में आती है, पर उसकी प्रामाणिकता प्रत्यक्ष पर निर्भर रहेगी सो अपने प्रतिपादनों को प्रत्यक्ष कीजिए। प्राय: एक वर्ष से संसार में अनेक विज्ञान संस्थाओं द्वारा यह चुनौती दी जा रही थी कि विचार और भावनाओं का स्थूल पदार्थों पर क्या प्रभाव पड़ सकता है, सो उसे प्रत्यक्ष करके दिखाया जाए। लोग इतना भर मानते थे कि विचारों-का-विचारों पर प्रभाव पड़ सकता है, पर उनका पदार्थों पर कैसे प्रभाव पड़ेगा?

यह सिद्ध किए बिना अध्यात्म में प्रचंड शक्ति होने की मान्यता लोगों के मनों में नहीं बिठाई जा सकती और जब तक उतना आकर्षण न हो लोग उसकी अधिक उपयोगिता स्वीकार न करेंगे। चूँकि अगला समय भौतिक विज्ञान के स्थान पर अध्यात्म विज्ञान को प्रतिष्ठापित करने वाला आएगा, अत: इसके लिए आधार बनना चाहिए और उस तरह की प्रत्यक्ष प्रामाणिकता प्रस्तुत की जानी चाहिए, जैसी कि प्रत्यक्षवादियों द्वारा माँगी जा रही है।

अपना चमत्कार दिखाने के लिए नहीं, वरन सर्वसाधारण को आत्मविद्या की उत्कृष्टता समझाने की और उस ओर रुझान उत्पन्न करने के लिए ऐसा प्रतिपादन एवं प्रत्यक्षीकरण आवश्यक हो गया है और चुनौती को स्वीकार कर लिया गया है।

चूँकि गुरुदेव को पिछले दिनों युग निर्माण योजना के संदर्भ में संगठनात्मक, प्रचारात्मक और आंदोलनात्मक कार्य अधिक करने पड़े और उनका अधिकांश समय तथा मनोयोग उधर ही लगा रहा। अस्तु उस प्रकार से प्रत्यक्ष प्रमाणित कर सकने योग्य क्षमता में कमी मालूम पड़ी।

इस कमी को पूरा करने के लिए ही इन दिनों उनके तप-साधन आध्यात्मिक व्यायामों के रूप में

चल रहे हैं। वे कितने जटिल और कठिन हैं, इसकी चर्चा सर्वसाधारण का विषय नहीं है, पर यहाँ इसलिए यह बताना पड़ा कि उनकी साहसिकता और योद्धा प्रवृत्ति कितनी बढ़ी-चढ़ी है और वे इस आयु में भी कितने दुस्साहसपूर्ण कार्य कितनी उमंग और कितने उत्साह के साथ कर सकने में संलग्न तथा समर्थ हैं।

अध्यात्म पर लगाया जाने वाला यह लांछन सही नहीं है कि जो यति है, वह योद्धा नहीं हो सकता। दोनों का समन्वय संभव ही नहीं, स्वाभाविक भी है। विश्वामित्र, अगस्त्य, श्रृंगी, परशुराम, वसिष्ठ, द्रोणाचार्य, दधीचि आदि ऋषियों के कठोर कर्तृत्वों को देखकर इस निष्कर्ष पर सहज ही पहुँचा जा सकता है कि अध्यात्म व्यक्ति को अकर्मण्य नहीं बनाता, वरन अधिक महत्त्वपूर्ण, अधिक भारी कार्य कर सकने की क्षमता प्रदान करता है।

उसी प्रकार यह मान्यता भी सही नहीं है कि मानसिक दृष्टि से व्यक्ति को दीन-दुर्बल, कायर, समझौतावादी एवं परावलंबी बनाना अध्यात्म की प्रवृत्ति है।

सही बात यह है कि उससे संकल्पशक्ति और अधिक तीव्र होती है तथा मानसिक एवं आत्मबल की आश्चर्यजनक बढ़ोत्तरी होती है। ब्रह्मचारी नपुंसक जैसा दिखता भर है, पर उसका पौरुष कामुकों की अपेक्षा बढ़ा-चढ़ा होता है। यति यदि सच्चा हो तो न उसका साहस कम होता और न शौर्य-पराक्रम।

व्यक्तिगत भौतिक प्रगति का जहाँ तक संबंध है यदि कोई इस ओर से उदासीन रहे और उपयोग की दृष्टि से न्यूनतम मात्रा अपने लिए प्रयोग करता है, सादगी और मितव्ययिता का जीवन जीता है तो यह ठीक है। यदि इसे ही गरीबी कहा जाता हो तो हर्ज नहीं; क्योंकि व्यक्तिगत आकांक्षाओं और वासना-तृष्णाओं से बचा रहे तो भी मनुष्य की विभूतियों का उपयोग परमार्थ एवं लोक-मंगल में हो सकेगा।

इसी प्रकार यह लांछन भी सही है कि अपने में व्यक्तिगत दृष्टि रखने वाले और ठगने वालों से यह बदला नहीं लेता। यह इसलिए सही है कि उस प्रतिशोध में बहुत शक्ति खरच होती है, उससे लाभ तो अकेले का ही होता है, पर हानि सबकी होती है जो सामाजिक अथवा अधिक बुरी तरह के अनाचारों का उत्पीड़न सह रहे थे। वस्तुत: सामूहिक दुष्प्रवृत्तियों से ही लड़ना अधिक उपयुक्त रहता है; क्योंकि उनके मिटने से असंख्य लोगों को राहत मिलती है।

सूफी संत राबिया अपनी ईश्वरनिष्ठा के लिए प्रख्यात थीं। एक दिन किसी ने उनसे आकर किसी व्यक्ति के विषय में पूछा—''वह कितना बड़ा नास्तिक है, आप उसके विषय में क्या सोचती हैं?''

राबिया ने उत्तर दिया—''परवरदिगार के अलावा और किसी के बारे में सोचने के लिए मुझे फुरसत नहीं मिलती तो उसके विषय में क्या सोचूँ? बुराइयाँ तो मुझमें ही सैकड़ों भरी पड़ी हैं तो उनको सुधारने के बजाय दूसरों के अवगुणों को देखने में अपना वक्त क्यों जाया करूँ?'' उस व्यक्ति की समझ में आ गया कि ईश्वरभक्ति वाले व्यक्ति को परनिंदा के लिए उकसाया नहीं जा सकता।

जहाँ तक व्यक्तिगत सुखोपभोग का संबंध है गुरुदेव ने अभावग्रस्त दरिद्री जैसा जीवन जिया। जहाँ तक व्यक्तिगत भौतिक उन्नति का संबंध है वे उसकी ओर सदा उपेक्षा की दृष्टि से देखते रहे। धन, यश और विलास इर्द-गिर्द इकट्ठा होने लगा तो ऐसी डुबकी लगाई कि जल के मगर उन्हें ताकते ही रह गए और वे देखते-देखते उनकी पकड़ से बाहर आ निकले।

यदि उन्होंने वैभव चाहा होता तो शासन में ऊँचे पद पर पहुँचे होते। राजनीति में उनका लोहा माना जाता, विद्वानों में मूर्द्धन्य गिने जाते और पैसा उनके पैरों में लोटा फिरता। फोटो छपते, अभिनंदन ग्रंथ मिलते और राज-सम्मान की उपाधियों से विभूषित होते और भी न जाने क्या-क्या होते। हिमालय जितनी क्षमताओं की प्रतिक्रिया बड़े-से-बड़े वैभव के रूप में उनके सामने खड़ी होती, पर इस संबंध में वे निस्पृह अवधूत की तरह ही बने रहे और अपनी बालसुलभ सरलता को ही अपनी सर्वोत्तम संगृहीत संपत्ति मानते रहे।

लोगों ने उन्हें कितना ठगा है, कुछ प्राप्त करने के लिए कितने-कितने प्रपंच रचे हैं और काम निकल जाने पर किस तरह तोताचस्मी दिखाते रहे हैं, इसका कभी कोई-कोई चुटकुला उनके मुँह से सुनने को मिल जाता है।

उन्हें उस पर तनिक भी क्षोभ नहीं, केवल लोगों का छोटापन समझकर विनोद मात्र करते हैं और कहते हैं, यह भोले लोग कुछ ऊँची चीज माँगने या पाने के इच्छुक होते तो हम जिस तरह एक समर्थ के दरवाजे पर जाकर अपनी झोली भर लाए थे, उसी तरह यह लोग भी कुछ काम की और वजनदार चीज लेकर जा सकते थे, पर ओछापन बेचारों को कृतज्ञता की सुखद अनुभूति तक का लाभ नहीं लेने देता है।

जो बहुत पुराने परिचित हैं, पर इस लंबी अवधि में वे जहाँ-के-तहाँ रहे और गुरुदेव को कहाँ-से-कहाँ पहुँचे हुए देख कुढ़ते हैं और ईर्ष्यावश अनेक तरह की क्षति पहुँचाने की कोशिश करते हैं—ऐसे ईर्ष्यालु लोगों के कुकृत्यों में बेसिर-पैर के लांछन लगाने से लेकर विष देने तक की जघन्य घटनाएँ शामिल हैं। उनसे प्रतिशोध लेने की बात गुरुदेव के मन में कभी नहीं आई, केवल बेचारे ही कहकर संबोधित करते रहे और कहते रहे—"वे जानते नहीं कि क्या कर रहे हैं और उलटकर इसका परिणाम उनके लिए क्या हो सकता है।"

इस प्रकार व्यक्तिगत लाभ और व्यक्तिगत प्रतिशोध की बात उन्हें सूझी ही नहीं। अपने आप को एक प्रकार से भूले ही रहे। अनुभव करते हैं कि उन्होंने अपनी व्यक्तिगत सत्ता को किसी महान सत्ता में घुला ही दिया है और अपना कहने लायक उनके पास कुछ रह ही नहीं गया है। प्रत्यक्ष रूप से इसे हानि या अपकर्ष कहा जा सकता है।

लोग व्यंग्य करते हैं कि जबकि उनसे पिछड़े हुए लोग मोटरों और हवाई जहाजों में उड़े फिरते हैं तब उनके पास साइकिल रिक्शा भी नहीं है। उस नजर से देखने वाले अध्यात्म को घाटे का सौदा कह सकते हैं, पर तब फिर गुरुदेव को ही नहीं, विश्वामित्र, भर्तृहरि, बुद्ध, महावीर, गांधी आदि न जाने कितनों को घाटा उठाने वाले सौदागर कहा जाएगा।

जब इतने दिवालिए मौजूद हैं तो हमें ही क्यों शरम आए यह कहते हुए अपनी गरीबी पर हमने उन्हें विनोद भरा रस लेते ही देखा।

पर यह निस्पृहता केवल व्यक्तिगत जीवन तक ही सीमित है। समाज की संपन्नता और सुविधा बढ़ाने की उन्हें उससे लाख करोड़ गुनी चिंता है, जितना किसी लोभी को अपनी व्यक्तिगत तृष्णाओं की पूर्ति के लिए हो सकती है।

समाज में फैले हुए अनाचार के प्रति उन्हें उससे लाख गुना रोष है, जितना अपना सर्वस्व लूट ले जाने वाले के और हाथ-पैर जला जाने वाले डाकू के प्रति हो सकता है। विश्ववेदना से व्यथित उनकी अंतरात्मा का रुदन कदाचित् ही कोई देख पाया हो, पर जो देख सकता है देख ले कि इस अनुपम व्यक्तित्व में व्यथा और आक्रोश का हिमाच्छादित ज्वालामुखी जैसा कैसा विचित्र संयोग सन्निहित है।

वे अपनी आग में हिमालय को पिघलाने गए हैं। वाणी, लेखनी से विचार क्रांति, नैतिक क्रांति की उनकी नवनिर्माण योजना चल रही है। रचनात्मक और संघर्षात्मक कार्यक्रमों को लेकर उनका विशाल परिवार व्यक्ति और समाज को बदलने के लिए लगा हुआ है। यह आंदोलनात्मक अभियान है, जो उपयोगी भी है और आवश्यक भी।

लोगों को अपने कर्त्तव्य का बोध कराने और युग की चुनौती स्वीकार करने के लिए तत्पर करने के लिए यह किए बिना काम नहीं चल सकता था, सो किया भी है, हो भी रहा है, पर जो हो रहा है वह कम है।

उसके लिए अभी बहुत बड़ी शक्ति की आवश्यकता है और शक्ति को उत्पन्न करने वाली अणु भट्ठी से उत्पन्न होने वाली ऊष्मा से भी अधिक प्रचंड तापमान की। सो उनकी वर्तमान तपश्चर्या का प्रयोजन यही है।

दीपक अपने को जलाकर ऊष्मा पैदा करने चले हैं जो दावानल की तरह भड़के और पाप के पतन के इस दंडकारण्य में छिपे हुए असुरों को जलाकर भस्म कर दे।

बाहर से अति सरल, अति सौम्य और अति शांत दिखने वाले इस महामानव में इतना रोष और इतना दरद हो सकता है, इसका पता उनके निकटवर्तियों को छोड़कर और किसे होगा।

वे किसी व्यक्ति विशेष का नाम नहीं लेते और न किसी को इंगित करते हैं, पर अपने समाज के (1) राजनेता, (2) धर्मगुरु, (3) बुद्धिजीवी, (4) कलाकार और (5) संपत्तिवानों के प्रति यह कहते जरूर हैं कि इनके हाथ में जो शक्ति है, उसका यदि उन्होंने सदुपयोग किया होता तो आज यह दुर्दिन न देखने को मिलते, जो देखने पड़ रहे हैं।

हो सकता है वे इन्हें ही पिघलाने के लिए तप कर रहे हों। हो सकता है उस तपश्चर्या की आग में पिघलकर इन पाँच पाषाणों में से शिलाजीत की धार बह निकले। हो सकता है वे सर्वसाधारण में अपने आलस्य और अपवाद से मुक्ति पाने के लिए विद्रोह उत्पन्न करने गए हों। संभव है कि विभूतियों का दुरुपयोग करने वाले विभूतिवानों को पदच्युत करने वाली परिस्थितियाँ उत्पन्न करने गए हों।

यति और योद्धा की उभयपक्षी विशेषताओं से परिपूर्ण अध्यात्म सार्थक है या निरर्थक, इसका प्रत्यक्ष परिणाम प्रस्तुत करने के लिए ही संभव है उनका वर्तमान साधन क्रम चल रहा हो। कारण कुछ भी हो सकते हैं, संयुक्त रूप से सब भी, पर वे करने कुछ विशेष ही गए हैं, उनकी यह विशेष तपश्चर्या स्वर्ग, मुक्ति, सिद्धि और शक्ति के लिए नहीं; क्योंकि उन्हें तो वे बहुत पहले ही प्राप्त कर चुके हैं।

अब तो अपनी पीड़ा में विश्वमानव की पीड़ा को घुलाकर वे एक तड़पते हुए घायल की तरह कहीं गए हैं। उनकी तड़पन परशुराम के कुल्हाड़े के रूप में, शिव के तीसरे नेत्र के रूप में, इंद्र के वज्र के रूप में प्रकट होकर नए परिवर्तन का न जाने क्या आधार प्रस्तुत करे? आज कौन कहे और कैसे कहे? ❑

दीक्षा देने का अधिकार मात्र महाप्राणों को है। जिसके पास कुछ वैभव है, वही दूसरे को दान दे सकेगा। जो स्वयं ही खाली हाथ है और याचना पर निर्वाह करता है, उससे कोई अनुदान मिलने की आशा व्यर्थ है।

—परमपूज्य गुरुदेव

स्थायी सफलता का राजमार्ग

जीवन में सफलता एक सापेक्ष शब्द है। भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के लिए सफलता के माने भिन्न हो सकते हैं। किसी के लिए इसका आधार धनकुबेर बनना हो सकता है, तो किसी के लिए बड़ा नाम, यश व पद।

कोई थोड़े में ही सफलता की संतुष्टि अनुभव कर सकते हैं, तो कोई सब कुछ पाकर भी सफलता की संतुष्टि से वंचित रह सकते हैं। कुछ ऐसे भी इनसान हैं, जिनके लिए सांसारिक नाम-दाम व उपलब्धियाँ अधिक माने नहीं रखते। राह में आ जाएँ तो इन्हें पुण्य-प्रारब्ध मानकर कर्त्तव्य कर्म के रूप में निभा जाते हैं और बाह्य उपलब्धियों से अधिक इनकी सफलता के माने आंतरिक पूर्णता से जुड़े होते हैं।

ये वैदिक ऋषियों द्वारा प्रणीत धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष के जीवन दर्शन में विश्वास रखते हैं और समग्र सफलता को अपना मार्गदर्शक मानते हैं। हर मानव में इस परिपूर्ण सफलता की चाह नैसर्ग में मिली हुई है; क्योंकि मूलत: वह ईश्वर का अंश है और उसकी पूर्णता का उत्तराधिकारी है, लेकिन यह बात दूसरी है कि कुछ ही सौभाग्यशाली इस समग्र सफलता को हस्तगत कर पाते हैं और यह अकारण नहीं है।

इसके पीछे कई कारक कार्य कर रहे होते हैं, जिनकी थोड़ी-बहुत समझ समग्र सफलता के मार्ग को सरल बना सकती है, जीवन की यात्रा को अधिक सुकून और आनंद से भरी बना सकती है। स्थायी सफलता के पीछे कई कारक सक्रिय होते हैं, कुछ प्रत्यक्ष तो कुछ अप्रत्यक्ष। यह भी सत्य है कि हर तरह की सफलता अपनी कीमत माँगती है।

इसके मूल में एक लक्ष्य के निमित्त दीर्घकालीन श्रम, समर्पण एवं नैष्ठिक प्रयास निहित रहते हैं और कुछ नियति द्वारा निर्धारित विधान की भूमिका रहती है।

सफलता का स्वरूप एक आइसबर्ग (हिमखंड) की तरह होता है, जिसका मात्र 10% भाग ही ऊपर सतह पर दिखाई देता है, शेष 90% भाग पानी के नीचे अदृश्य रहता है।

ऐसे ही दर्शकों को दृश्यमान सफलता की तात्कालिक ऊपरी चमक-दमक भरी उपलब्धियों का आंशिक सत्य ही दिखाई पड़ता है, जिसे देख उनकी आँखें चुँधिया रही होती हैं। जबकि पूर्ण सत्य सतह के नीचे की समय-साध्य एवं कष्टसाध्य जटिल सच्चाई में छिपा होता है।

हाल ही में घटित ओलंपिक खेलों में मेडल ले कर देश का नाम रोशन करने वालों की तात्कालिक सफलता के पीछे सक्रिय कारकों को देखकर इस सत्य का साक्षात्कार किया जा सकता है। वे एक दिन में इस मुकाम तक नहीं पहुँचे, बल्कि दशकों के अथक श्रम व समर्पण-निष्ठा के आधार पर वे इसे प्राप्त कर पाए। यही हर क्षेत्र की सफलता से जुड़ा सत्य है।

अपने क्षेत्र में सफल अधिकांश व्यक्तियों को कितने दशकों तक अभाव में संघर्ष करना पड़ता है। कितने दिन, कितनी रातें गुमनामी के अँधेरे में तिल-तिल जलते व गलते हुए बितानी पड़ती हैं। असफलता के कितने कड़ुए घूँट राह में पीते हुए अनवरत संघर्ष पथ पर बढ़ते रहना होता है। लोगों की प्रताड़ना, अपनों के उपहास-अवहेलना के कितने आघात सहन करने पड़ते हैं।

कितना समय संदिग्ध अवस्था में सफलता-असफलता के झूले में झूलते हुए बिताना पड़ता है और तथाकथित शुभचिंतकों की दुरभिसंधियों को भी पार करते हुए निरंतर आगे बढ़ना होता है। तब जाकर कहीं सफलता की बुलंदी का सफर तय होता है। साररूप में सफलता का मार्ग गुमनामी की अँधेरी गलियों से होकर तमाम तरह के झंझावातों, प्रतिकूलताओं के बीच अपनी ध्येय-निष्ठा की अनगिनत अग्निपरीक्षाएँ पार करते हुए उपलब्ध होता है।

सफलता में हालाँकि एक कारक भाग्य का भी रहता है, जिसे विधान ने किसी की नियति में तय किया होता है। इसको भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। तो क्या यह बिना किसी श्रम के कार्य करता है? उत्तर है नहीं। यह भी पूर्वकृत कर्मों का फल ही रहता है।

ईश्वर की कर्मप्रधान सृष्टि में भाग्य जैसी कोई चीज नहीं, जो बिना कारण के घटती हो। यहाँ सब ईश्वरीय विधान के अंतर्गत कार्य कर रहा है। इसे प्रारब्ध भी कह सकते हैं और ये अच्छे भी हो सकते हैं तथा बुरे भी।

बुरे व पापकर्मों के पके प्रारब्ध फल रोग, शोक, अपमान, दु:ख, कष्ट, पीड़ा, पतन-पराभव के रूप में प्रकट होते हैं; जबकि दान, पुण्य, तप, पुरुषार्थ, सेवा के पके प्रारब्ध फल सफलता, यश-कीर्ति, सुख-शांति, उत्थान और सद्गति के रूप में सामने आते हैं। इस तरह सफलता के पीछे भाग्य के रूप में आभासित कारण कर्म की डोर से जुड़े होते हैं।

इसी आधार पर परमपूज्य गुरुदेव कहते हैं कि हम कर्म करने में स्वतंत्र हैं, लेकिन इसके परिणाम में नहीं और जो जैसा सोचता है, वह वैसा ही करता है और अंतत: वैसा ही बन जाता है तथा भाग्य के बारे में एक बात सुनिश्चित है कि यदि कोई चाहे तो इसे बदल सकता है, लेकिन भाग्य के आधार पर हस्तगत सफलता या विभूति भी नश्वर होती है।

यदि व्यक्ति हाथ-पर-हाथ धरकर बैठ जाए, तो समय के साथ यह सफलता भी अपनी चमक खो बैठती है और यदि चिंतन, चरित्र एवं व्यवहार में असंयम, आलस्य-प्रमाद और संकीर्णता हावी होते गए तो इनके छिनते भी देर नहीं लगती।

इसी कारण सफलता के शिखर पर भी रसातल में जाते आएदिन कितने लोगों को देखा जा सकता है और यदि बात करें स्थायी सफलता की तो इसके मूल में उपरोक्त वर्णित कारकों के साथ रहती है—आत्मपरिष्कार एवं आत्मसुधार की प्रक्रिया, जिसे विश्व की सबसे वांछनीय, किंतु सबसे कठिन व कष्टप्रद प्रक्रिया भी माना गया है।

कोई भी सफल व्यक्ति आत्मानुशासन की भट्ठी में तपकर ही किसी सार्थक कहे जाने योग्य मुकाम तक पहुँच पाता है। उसकी सफलता के पीछे उसका प्रचंड पुरुषार्थ, अनवरत प्रयास, असीम धैर्य और अथक श्रम सक्रिय रहते हैं।

इन सद्गुणों को बनाए रखने पर ही सफलता स्थायी रूप में टिकी रहती है अन्यथा संयम-सदाचार के अभाव में यह सफलता भी अधिक देर तक नहीं टिक पाती। जीवन में सुख, शांति और स्थिर सफलता के आकांक्षी लोग इस सत्य को भली भाँति जानते हैं और ऋषिप्रणीत जीवन के राजमार्ग पर आरूढ़ रहते हैं।

यहाँ सांसारिक सफलता-असफलता के अधिक माने नहीं रहते। अपने कर्त्तव्य कर्म को पूरी निष्ठा व जिम्मेदारी के साथ निभाते हुए वे अपनी पात्रता विकसित करते हुए शाश्वत सफलता के मार्ग पर अग्रसर रहते हैं और राह में आंतरिक विभूतियाँ और सांसारिक उपलब्धियाँ भी उन्हें समय-समय पर मिलती रहती हैं, जिनका वे व्यापक जनहित में नियोजन करते हैं। यही सफलता का स्थायी राजमार्ग है। ❑

पक्षियों की विचित्र दुनिया

पक्षियों का संसार विचित्रताओं से भरा-पूरा होता है तथा प्रकृति में जीव-जंतुओं का अपना संसार होता है। पक्षियों का रंग-बिरंगा संसार भी इसी दुनिया का अंग है। इनकी हजारों प्रजातियाँ पाई जाती हैं। ये स्वयं जितने मनमोहक होते हैं, इनका रहन-सहन और खाने-पीने की रुचियाँ भी उतनी ही अनोखी व रोचक हैं। इन पक्षियों में शुतुरमुर्ग को सबसे बड़ा पक्षी माना जाता है।

शुतुरमुर्ग के संबंध में एक रोचक तथ्य प्रचलित है कि जब वह चारों ओर से घिर जाता है तो रेत में अपना सिर छिपा लेता है, परंतु यह सत्य नहीं है। परेशान किए जाने पर शुतुरमुर्ग जमीन पर लेट जाता है और सिर व गरदन आगे निकालकर लेट कर चारों ओर देखता है, ताकि उसकी ओर किसी का भी ध्यान न जाए। जब संकट एकदम सिर पर आ पड़ता है तो शुतुरमुर्ग भी अन्य पक्षियों की तरह भाग खड़ा होता है।

पंख छोटे होने के कारण शुतुरमुर्ग उड़ नहीं सकता, पर एक वयस्क शुतुरमुर्ग 80 किलोमीटर प्रतिघंटे की रफ्तार से दौड़ सकता है। इसकी दृष्टि इतनी प्रखर होती है कि यह कई किलोमीटर दूर तक देखने की क्षमता रखता है। इसकी लंबी टाँगों में इतनी शक्ति होती है कि एक ही बार में आदमी के हाथ तोड़ दे।

शुतुरमुर्ग पेड़ों की पत्तियाँ-बीज-फल से लेकर छिपकली जैसे जीवों को भी निगल जाता है। यह कंकड़-पत्थर खाने का भी शौकीन होता है। दक्षिण अफ्रीका के केपटाउन में आउडशोर्न नाम का एक कस्बा है, जो विश्व में शुतुरमुर्गों की राजधानी मानी जाती है।

पक्षियों की दुनिया की सबसे छोटी चिड़िया हमिंग बर्ड का वजन 1.5 ग्राम के करीब होता है। इसके घोंसले का व्यास एक इंच का तीन-चौथाई होता है। इसके पंखों के रंग-पन्ना, माणिक आदि रत्नों की भाँति चमकते हैं; जो इसकी शोभा को शतोगुणित कर देते हैं।

इस चिड़िया का उड़ने का ढंग भी निराला है। इसके पंखों की औसतन फड़कन एक मिनट में 500 बार होती है। यह हवा में बिना किसी सहारे के काफी समय तक ठहरी रह सकती है। फूलों का रस ही इनका भोजन है।

अपने देश में तोता पालने का शौक सदियों पुराना है। संसार भर में प्राय: 150 किस्म के तोते पाए जाते हैं। अभी तक सबको यही बात मालूम है कि तोते बोली की नकल करने में सिद्ध होते हैं, पर कम लोग ही इस सत्य से परिचित हैं कि यह आस-पास की बातें व आवाजें सुनने में भी सिद्ध होते हैं। तोते दूर-दराज की बातें मनोयोगपूर्वक सुन लेते हैं। इसी को ध्यान में रखकर प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान पेरिस में उन्हें एफिल टावर पर बैठाया गया था, ताकि वे हवाई हमले की पूर्व चेतावनी दे सकें। मनुष्य ही नहीं, पक्षी भी फलों के बेहद शौकीन होते हैं।

गाने वाली चिड़िया के नाम से विख्यात बुलबुल बड़े चाव से फल खाती है। अपने बच्चों से बहुत प्यार करने वाली यह चिड़िया उन्हें गाना एवं उड़ना सिखाती है। सदा गाने वाली इस बुलबुल का उर्दू व फारसी के साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान है और इसे 'बुलबुल हजारदास्ताँ' का खिताब भी मिला हुआ है।

एक अन्य चिड़िया जिसका नाम कैसोवरी है, वह सफेद अंडों की जगह हरे अंडे देती है। यह कैसोवरी अपनी बड़ी आकृति के बावजूद दिखने में बेहद सुंदर होती है, पर इसे गुस्सा बहुत जल्दी आ जाता है और गुस्से के दौरान यह मनुष्य का पेट तक चीर डालती है। इनमें नर कैसोवरी ही बच्चों के पालन-पोषण का दायित्व सँभालता है।

भारतीय चिड़ियों में सबसे सुंदर चिड़िया है 'सनबर्ड'। इसको घरेलू बाग-बगीचों, हरे-भरे वनप्रदेशों, फूलों की घाटियों, झाड़ीदार वनों, अधिक रसीले फलों वाले बगीचों में देखा जा सकता है। इसके घोंसलों की बनावट अद्‌भुत होती है। इसके अंदर जाने के लिए एक छेदनुमा दरवाजा होता है, जिसके ऊपर छज्जा-सा बना होता है।

भारत के बारहमासी पक्षियों के वर्ग में आने वाली एक अन्य चिड़िया है—अबाबील। यह अपना घोंसला वृक्षों पर नहीं बनाती, बल्कि यह निर्जन इमारतों पर बसेरा करती है। इसके मुँह से लार जैसा पदार्थ निकलता है, जिससे यह मिट्टी, घास, फूल और तिनकों को मकान की दीवार या छत से चिपका देती है। इस सामग्री से जो घोंसला तैयार होता है, वह प्याले के आकार का होता है।

मनुष्यों में जिस प्रकार कुछ जातियाँ 'घुमक्कड़' प्रकृति के कारण विख्यात हैं, उसी प्रकार पक्षी समाज में भी ऐसे पक्षी होते हैं, जिनका सारा जीवन यात्रा या प्रवास में बीत जाता है। ऐसे पक्षियों में जंगली बतख सर्वाधिक प्रसिद्ध है। सरदियों में यूरोप, उत्तरी एशिया, लद्‌दाख, तिब्बत से लेकर अनेक प्रकार की बतखें भारत के जलपूर्ण मैदानी इलाकों में आ जाती हैं।

इस प्रवासप्रिय पक्षी को लंबी यात्राओं में अनेकों कष्ट भोगने पड़ते हैं। इतना ही नहीं, इन्हें बड़े-बड़े खतरों का सामना भी करना पड़ता है। ये बतखें 80-90 कि.मी. प्रतिघंटे की रफ्तार से सहज उड़ान भर लेती हैं।

'टर्न' पक्षी भी प्रवासी पक्षी के रूप में प्रसिद्ध है। ये प्रतिवर्ष कम-से-कम 20000 मील की यात्रा कर लेती है। गिनीज बुक के अनुसार 5 जुलाई, 1955 को कंडलक्ष सेंचुरी में एक आर्कटिक टर्न को इसके घोंसले में छल्ला पहनाया गया। बाद में 16 मई, 1956 को एक मछुआरे ने जब इसे पश्चिमी आस्ट्रेलिया में जीवित पकड़ा तो इस समय तक यह चिड़िया 19,200 किलोमीटर की दूरी तय कर चुकी थी।

साइबेरिया के सफेद सारस भी सरदियों में प्रतिवर्ष भारत प्रवास पर आते हैं। लगभग 7,000

फार्म—4

(1) प्रकाशन स्थान	मथुरा
(2) प्रकाशन अवधि	मासिक
(3) मुद्रक का नाम	मृत्युंजय शर्मा
क्या भारत का नागरिक है	हाँ
पता	जनजागरण प्रेस, वृंदावन मार्ग, मथुरा
(4) प्रकाशक का नाम	मृत्युंजय शर्मा
(5) संपादक का नाम	डॉ० प्रणव पंड्या
क्या भारत का नागरिक है	हाँ
पता	शांतिकुंज, हरिद्वार
(6) उन व्यक्तियों के नाम व पते, जो समाचारपत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूँजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।	मृत्युंजय शर्मा अखण्ड ज्योति संस्थान, बिरला मंदिर के सामने, मथुरा-वृंदावन रोड, जयसिंहपुरा, मथुरा (उ. प्र.)

मैं मृत्युंजय शर्मा एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं। —*मृत्युंजय शर्मा*

कि०मी० रास्ता तय कर ईरान, अफगानिस्तान व पाकिस्तान की झीलों में पड़ाव डालते हुए ये 'भरतपुर पक्षी विहार' में पहुँचते हैं। पूर्णतः शाकाहारी ये सफेद सारस पक्षी विहार में उगी वनस्पति 'साइप्रस रोटेंटस' की जड़ों को खाना ज्यादा पसंद करते हैं।

पक्षियों में हरियल पक्षी बेहद शरमीला होता है और सारा जीवन पेड़ों पर ही बिता देता है। पूर्ण शाकाहारी यह पक्षी सिर्फ पीपल जाति के पेड़ जैसे बड़, गूलर, पीपल, अंजीर आदि वृक्षों के पत्ते ही खाता है। पेटू प्रकृति के इस पक्षी को फलों में बेर, चिरौंजी व जामुन ज्यादा पसंद हैं।

हरियल की तरह 'चाहा' पक्षी भी बेहद शरमीला होता है, पर वसंत के मौसम में यह प्रकृति के सौंदर्य का आनंद लेने के लिए ऊँचे आकाश में विचरण करता है और जल्दी ही 40 या 50 डिगरी का कोण बनाते हुए तेजी से नीचे की ओर आता है।

नीचे उतरते समय यह एक तीखी आवाज करता है, जिसे एक किलोमीटर की दूरी तक भी सुना जा सकता है। यह 'चाहा' पक्षी बिना रीढ़ की हड्डी वाले छोटे जीव-जंतुओं को अपना भोजन बनाता है।

पक्षी मौसम विशेषज्ञ भी होते हैं। इनकी मौसम के बारे में जानकारी को आश्चर्यजनक श्रेणी में रखा जा सकता है। 'सीगल' ऐसे पक्षियों में प्रमुख है। सीगल यदि मछलियों के शिकार के लिए समुद्र में जाती है, तो माना जाता है कि मौसम निश्चित रूप से अच्छा रहेगा, परंतु यदि वह अपने ही क्षेत्र में लगातार उड़ती रहे तो समझना चाहिए कि मौसम शीघ्र ही खराब होने वाला है।

वैसे तो सामान्यतया सभी समुद्री पक्षियों में कोई-न-कोई विशेषता पाई जाती है, लेकिन पफिन अपनी विशेषताओं में कुछ ज्यादा ही विशेष है। इसे समुद्री तोता भी कहा जाता है। ये अपने आप में कुशल तैराक व गोताखोर होते हैं। इन्हें 200 फीट की गहराई तक गोता लगाते हुए पाया गया है।

अपनी चोंच में एक ही बार में ढेर सारी मछलियाँ पकड़ने के लिए पफिन विख्यात है। एक पफिन की चोंच में 72 मछलियाँ भी देखी गई हैं। पफिन बहुत ही जिज्ञासु व सामाजिक प्रवृत्ति का पक्षी है। तटवर्ती चट्टानों के क्षेत्र में इनके घोंसलों की विशाल कॉलोनियाँ देखी जा सकती हैं। प्रजननकाल में इनकी कॉलोनियों में इनकी संख्या हजारों में नहीं, बल्कि लाखों में होती है। पफिन पाँच वर्ष की उम्र से अपने जोड़े बनाने लगते हैं और इनके ये जोड़े जीवन भर के लिए होते हैं।

पक्षियों का संसार अनोखा एवं अद्भुत होता है। इनकी सुरक्षा एवं संरक्षण के लिए विशेष ध्यान देना चाहिए। ❑

इन दिनों मनुष्य जाति का भाग्य नए कागज पर, नई स्याही से, नए सिरे से लिखा जा रहा है। इस उथल-पुथल में हमारा स्थान कहाँ पर हो, चयन करने का ठीक यही अवसर है। पीछे तो जहाँ जिसका, जिस प्रकार नियोजन होगा, उसे उसी जगह अपने को विवश मान खड़ा रहना पड़ेगा।

—परमपूज्य गुरुदेव

ब्रह्मवर्चस-देव संस्कृति शोध सार–192

विज्ञान पत्रकारिता पर शोध

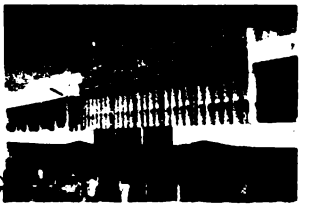

वर्तमान युग विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का युग है। वैज्ञानिक क्रांति ने मनुष्य जीवन को अत्यधिक प्रभावित किया है और अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बना लिया है। हमारे आस-पास की दुनिया को देखें; जीवनस्तर के विकास और सुधार को देखें तो पता चलता है कि यह सब विज्ञान और प्रौद्योगिकी की ही देन है। चूँकि प्रौद्योगिकी भी विज्ञान की ही देन है, अत: मुख्य रूप से विज्ञान की ही महत्ता है कि जीवन को सरल और विकसित रूप प्राप्त हो पाया है। हमारी संस्कृति में तो मानव अस्तित्व के प्रत्येक आयामों में विज्ञान को समन्वित करने की परंपरा रही है।

वैदिककाल से लेकर पौराणिक और दार्शनिक परंपराओं तक सभी में वैज्ञानिकता से परिपूर्ण साहित्य उपलब्ध होता है। ऋषि-परंपराओं में तो उनकी अनुसंधानशालाओं से उच्च कोटि का ज्ञान-विज्ञान प्रकट हुआ है।

प्रकृति और जीवन के सिद्धांत, ब्रह्मांड की समझ, देश-काल की गणनाएँ, जीवनपद्धति, मूल्यों-परंपराओं में समाहित मनोविज्ञान, मानव, प्रकृति और पर्यावरण के संबंध, स्वास्थ्य, औषधि, तकनीकी जैसे अनेक वैज्ञानिक पहलू हैं, जिन पर प्रचुर मात्रा में साहित्य उपलब्ध होता है।

अत: स्पष्ट है कि विज्ञान का संबंध मनुष्य जीवन से प्राचीनकाल से ही रहा है, परंतु आधुनिक युग में इसकी अत्यधिक व्यापकता हो गई है। विज्ञान के बिना अब जीवन की कल्पना करना भी मुश्किल है। विज्ञान के क्षेत्र में निरंतर प्रगति और इसके विकसित विविध आयामों ने पूरी दुनिया को एक वैश्विक गाँव में बदल दिया है।

यह दरसाता है कि मानव सभ्यता और समाज ने विज्ञान को अपने जीवन-विकास की यात्रा में प्रामाणिक और विश्वसनीय साधन के रूप में स्वीकार किया है। मौजूदा जीवन की समस्याओं व असुविधाओं के निराकरण व भविष्य की प्रगति व संभावनाओं की दृष्टि से मनुष्य जीवन में विज्ञान की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। अत: विज्ञान के क्षेत्र में जो भी नया शोध-अनुसंधान होता है, समाज उसे जानने, समझने और अपनाने के लिए उत्सुक रहता है। विज्ञान की जानकारी समाज तक लाने का जो कार्य है, वह है संचार माध्यमों का।

प्राचीनकाल में इन संचार माध्यमों का जो भी स्वरूप रहा हो, लेकिन आधुनिक युग में तो विज्ञान पत्रकारिता के नाम से इसका एक अलग ही विशिष्ट आयाम और स्वरूप है। विज्ञान पत्रकारिता का उद्देश्य ही है विज्ञान के प्रामाणिक तथ्यों, उपयोगी जानकारियों को आम लोगों तक पहुँचाकर उन्हें लाभ प्रदान करना। इसके साथ ही जनसामान्य में वैज्ञानिक क्षेत्रों के प्रति जागरूकता लाना तथा वैज्ञानिकों तक जनसमस्याओं एवं आवश्यकताओं को सही रूप में रखने की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

विज्ञान पत्रकारिता का हमारे देश-समाज के संदर्भ में क्या स्वरूप है और इस पत्रकारिता से जुड़े आयामों की क्या भूमिका है? इन सवालों की पृष्ठभूमि पर विगत दिनों, देव संस्कृति विश्वविद्यालय में एक महत्त्वपूर्ण शोध अध्ययन का कार्य संपन्न किया गया है। यह कार्य विश्वविद्यालय के पत्रकारिता एवं संचार विभाग के अंतर्गत वर्ष-2020 में शोधार्थी रश्मि नेगी द्वारा

श्रद्धेय कुलाधिपति डॉ० प्रणव पण्ड्या जी के विशेष संरक्षण एवं डॉ० सुखनंदन सिंह के निर्देशन में पूर्ण किया गया है।

इस शोध अध्ययन का विषय है—**'स्टेटस ऑफ साइन्स कवरेज इन इंडियन न्यूजपेपर्स (हिंदी एंड इंग्लिश)।'** वैज्ञानिक एवं प्रायोगिक रीति से संपन्न किए गए इस शोध अध्ययन को कुल छह अध्यायों में विभाजित किया गया है।

भारतीय समाचारपत्रों में विज्ञान संबंधी पाठ्यसामग्री की उपयुक्तता का मूल्यांकन करने के मुख्य उद्देश्य को सामने रखकर शोधार्थी ने इस अध्ययन में पाठक अनुसंधान विधि का प्रयोग किया है। इस पद्धति में समाचार पढ़ने वाले पाठक, संपादक तथा इस विषय से संबंधित शोधार्थी व वैज्ञानिकों के मत सम्मिलित किए गए हैं।

इसमें विशेष रूप से पाठकों और संपादकों के मत एवं कथनों का अध्ययन कर तथ्यों का तुलनात्मक विश्लेषण किया जाता है, ताकि सार्थक परिणाम की प्राप्ति संभव हो सके। शोधार्थी द्वारा अपने इस शोध के प्रयोगात्मक पक्ष को पूर्ण करने के लिए उत्तराखंड राज्य की राजधानी देहरादून को चयनित किया गया।

शोधार्थी का मत था कि देहरादून में प्रिंट मीडिया की स्थिति अच्छी है और सभी प्रमुख समाचारपत्रों का यहाँ प्रकाशन होता है। अत: देहरादून जिले को उपयुक्त मानते हुए उद्देश्यपूर्ण चयन विधि को प्रयुक्त कर शोधार्थी द्वारा चार हिंदी भाषा के तथा चार अँगरेजी भाषा के समाचार पत्रों का चयन किया गया।

हिंदी के चयनित चार समाचारपत्र हैं—

(i) दैनिक जागरण
(ii) हिंदुस्तान
(iii) अमर उजाला
(iv) राष्ट्रीय सहारा

अँगरेजी के चयनित समाचारपत्र हैं—

(i) हिंदुस्तान टाइम्स
(ii) टाइम्स ऑफ इंडिया
(iii) इंडियन एक्सप्रेस
(iv) दि हिंदू।

समाचारपत्रों के चयन के पश्चात यादृच्छिक चयन विधि द्वारा 200 हिंदी के पाठकों तथा 200 अँगरेजी के पाठकों का चयन किया गया। इसके साथ ही समाचारपत्रों में विज्ञान संबंधित पाठ्य सामग्री पर राय जानने के उद्देश्य से 50 वैज्ञानिकों एवं शोधकर्त्ताओं को भी चयनित किया गया।

शोध प्रयोग की अवधि अप्रैल, 2015 से सितंबर, 2015 रखी गई तथा अवधि के प्रत्येक माह के प्रथम सप्ताह में शोध आँकड़ों को प्राप्त किया गया।

ब्रह्मैवाहं समः शान्तः सच्चिदानन्दलक्षणः।
नाहं देहो ह्यसद्रूपो ज्ञानमित्युच्यते बुधैः॥

—अपरोक्षानुभूति, 24

अर्थात सभी में समान रहने वाला, शांत, सच्चिदानंद रूप ब्रह्म मैं (जीवात्मा) ही हूँ। क्षण-भंगुर देह मैं नहीं हूँ, इसी को बुद्धिजन ज्ञान कहते हैं।

शोध तथ्यों एवं आँकड़ों की प्राप्ति हेतु जिन शोध-उपकरणों को प्रयुक्त किया गया, वे हैं—

(i) शोधार्थी द्वारा निर्मित 'पाठक प्रश्नावली'
(ii) प्रकाशित पाठ्य सामग्री के मूल्यांकन हेतु 'सामग्री विश्लेषण विधि'
(iii) शोधार्थी द्वारा निर्मित 'संपादक अनुसूची'
(iv) वैज्ञानिकों अथवा शोधकर्त्ताओं की अनुसूची, जिसे स्वयं शोधार्थी द्वारा तैयार किया गया था।

शोधार्थी द्वारा शोध-तथ्यों के विश्लेषण के लिए जिन मानदंडों का निर्धारण किया गया था, वे हैं—चयनित हिंदी व अँगरेजी समाचारपत्रों में प्रकाशित समाचार, फीचर, समाचार विश्लेषण, संपादकीय, फोटो-ग्राफिक्स, संपादकों के पत्र, साक्षात्कार, परिचर्चा और विज्ञान से संबंधित प्रश्न।

इसके साथ ही उन मानदंडों को भी शोध में सम्मिलित किया गया, जिससे समाचारपत्रों के पृष्ठों में विज्ञान सामग्री को प्रकाशित करने का स्थान मापा जा सके। लेखनशैली, प्रस्तुतीकरण, भाषाशैली आदि मानकों को भी देखा गया।

अध्ययन से प्राप्त शोध-तथ्यों-आँकड़ों का चयनित शोध मानदंडों के आधार पर विश्लेषण करने पर शोधार्थी को शोध परिणाम के रूप में अत्यंत महत्त्वपूर्ण एवं सार्थक जानकारी प्राप्त हुई है। जैसे शोध परिणाम में यह पाया गया कि चयनित समाचारपत्रों में विज्ञान-समाचारों का कवरेज अच्छा नहीं है।

परिणामों में यह भी देखा गया कि संपादकीय नीतियों के प्रभाव, स्थान की उपयुक्तता, पृष्ठों के क्रम की स्थिति, विज्ञान-समाचारों की भाषा तथा पाठकों के प्रति संपादकों के विचार एवं समय आदि का विज्ञान-समाचारों के कवरेज से कोई सामंजस्य नहीं प्रदर्शित करता है।

इस शोध अध्ययन के निष्कर्ष में यह भी पाया गया कि विज्ञान से संबंधित समाचारों को मुखपृष्ठ, पूरकपृष्ठ की अपेक्षा अन्य विज्ञान संबंधी समाचारों के बीच ही अधिकतम प्रकाशित किया गया है।

शोध परिणामों में यह भी देखा गया कि समाचारपत्रों की भाषा और समाचार मूल्यों का पालन करते हुए ही विज्ञान-समाचार भी प्रकाशित किए जाते हैं। विज्ञान-समाचारों के लिए अलग से कोई विशेष मानदंड निर्धारित नहीं है। शोधार्थी ने यह भी पाया कि विज्ञान-समाचार के संदर्भ में संपादकों का अनुमान और पाठकों की रुचि मेल नहीं खाती है।

इसके अतिरिक्त अन्य शोध मानदंडों के परिणामों में भी यही पाया गया कि पाठकों और संपादकों की धारणाओं में विज्ञान-समाचार को लेकर कोई महत्त्वपूर्ण संबंध एवं सामंस्य नहीं है। अत: शोध-निष्कर्ष के रूप में शोध अध्ययन में यह पाया गया कि भारतीय समाचारपत्रों में विज्ञान की कवरेज उचित नहीं है और अधिकांशत: पाठकों की सोच और संपादकों की सोच में भिन्नता है।

उक्त शोध और इसके निष्कर्ष के आधार पर यह स्पष्ट है कि विज्ञान पत्रकारिता को लेकर प्रिंट मीडिया के क्षेत्र में जो कमियाँ उजागर हुई हैं, उस दिशा में सार्थक प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। मनुष्य जीवन में मीडिया और विज्ञान, दोनों का ही समान रूप से महत्त्व है।

ऐसे में दोनों में सामंजस्य ही विज्ञान पत्रकारिता के वास्तविक उद्देश्यों की पूर्ति करने का उपाय हो सकता है। चूँकि भारत में प्रिंट मीडिया का अत्यधिक चलन है और इसके पाठकों में निरंतर वृद्धि दर्ज की जा रही है, तब ऐसे में विज्ञान जैसे महत्त्वपूर्ण और उपयोगी क्षेत्र की प्रमाणित एवं उपयोगी जानकारी लोगों तक पहुँचाने में इसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका हो सकती है।

शोधार्थी का यह शोध अत्यंत सामयिक और प्रेरक है तथा वर्तमान में विज्ञान पत्रकारिता की दिशा और दशा की वस्तुस्थिति उजागर करने वाला यह एक उपादेयी प्रयास है। ❑

युगगीता – 299

आत्मा को अकर्त्ता बनाने का सिद्धांत

(श्रीमद्भगवद्गीता के मोक्ष संन्यास योग नामक अठारहवें अध्याय की तेरहवीं किस्त)

[श्रीमद्भगवद्गीता के अठारहवें अध्याय के बारहवें श्लोक पर चर्चा विगत किस्त में की गई थी। इस श्लोक में श्रीभगवान अर्जुन को बताते हैं कि कर्मफल का त्याग न करने वाले मनुष्यों को कर्मों का इष्ट, अनिष्ट और मिश्रित—ऐसा तीन प्रकार का फल मरने के बाद प्राप्त होता है, परंतु कर्मफल का त्याग करने वालों को नहीं होता। यहाँ भगवान श्रीकृष्ण यह स्पष्ट करते हैं कि कर्म करने वालों को, विशेष रूप से फलेच्छा के साथ कर्म करने वालों को तीन प्रकार के कर्मफल प्राप्त होते हैं। इष्ट अर्थात किए गए कर्म की इच्छा के अनुकूल फल की प्राप्ति एवं अनिष्ट अर्थात उसके प्रतिकूल फल की प्राप्ति। कुछ कर्मों के प्रतिफल मिश्रित होते हैं अर्थात अनुकूल एवं प्रतिकूल, दोनों फलों की प्राप्ति उसमें जुड़ी हुई होती है।

यहाँ जो मूल्यवान बात है वह यह कि ज्ञानियों की दृष्टि से ये तीनों ही एक दृष्टि से बंधन ही हैं। चाहे हम अनुकूल परिणाम को प्राप्त करके सुखी अनुभव करें या प्रतिकूल परिणाम को प्राप्त करके दुःखी अनुभव करें या ये दोनों अनुभव हमें एक साथ प्राप्त हों—ये सब वस्तुस्थिति में बंधन ही हैं। श्रीभगवान कहते हैं कि जिन्होंने फलेच्छा का त्याग कर दिया है उनको मरने के बाद कर्मफल नहीं भोगना पड़ता है। श्रीभगवान इस श्लोक में कहते हैं कि 'प्रेत्य भवति' अर्थात जिन्होंने कर्मफल का त्याग नहीं किया है उनको इष्ट, अनिष्ट और मिश्रित—ये तीनों कर्मफल मरने के बाद अवश्य मिलते हैं। ऐसा कहने के साथ ही वे यह भी कहते हैं कि 'न तु सन्यासिनां क्वचित्' अर्थात फलेच्छा का त्याग करने वालों को वो फल न जीते जी मिलता है और न मरने के उपरांत। इससे प्रमाणित होता है कि कर्मफल का त्याग न करने वालों को मरने के बाद तो कर्मफल मिलता ही है, जीते जी भी मिल सकता है।]

इसके उपरांत श्रीभगवान अगला श्लोक कहते हैं—

पञ्चैतानि महाबाहो कारणानि निबोध मे।
साङ्ख्ये कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम्॥ 13॥

शब्दविग्रह—पञ्च, एतानि, महाबाहो, कारणानि, निबोध, मे, साङ्ख्ये, कृतान्ते, प्रोक्तानि, सिद्धये, सर्वकर्मणाम्।

शब्दार्थ—हे महाबाहो! (**महाबाहो**), संपूर्ण कर्मों की (**सर्वकर्मणाम्**), सिद्धि के (**सिद्धये**), ये (**एतानि**), पाँच (**पञ्च**), हेतु (**कारणानि**), कर्मों का अंत करने के लिए उपाय बतलाने वाले (**कृतान्ते**), सांख्यशास्त्र में (**साङ्ख्ये**), कहे गए हैं (**प्रोक्तानि**), उनको (तू) (**तानि**), मुझसे (**मे**), भली भाँति जान (**निबोध**)।

अर्थात हे महाबाहो! कर्मों का अंत करने वाले सांख्य सिद्धांत में संपूर्ण कर्मों की सिद्धि के लिए पाँच कारण बताए गए हैं, इनको तू मुझसे समझ।

सांख्य का मूल सिद्धांत समस्त कर्मों का अंत करने का पथ दिखाता है—उस सांख्य सिद्धांत में विहित और निषिद्ध, इस तरह से कर्मों के होने के पाँच हेतु बताए गए हैं, यहाँ भगवान श्रीकृष्ण उसी सिद्धांत की ओर इशारा करते हुए अर्जुन को कहते हैं कि वो उन सिद्धांतों के कर्म को स्वयं भगवान के मुख से सुने।

इस सूत्र में भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि **'सांख्ये कृतान्ति प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम्'**—अर्थात कर्म चाहे शास्त्रविहित हों या फिर शास्त्रविरुद्ध हों, चाहे वो शरीर से किए जाएँ या फिर मन से या फिर वाणी से—इन संपूर्ण कर्मों की सिद्धि के लिए सांख्य सिद्धांत में पाँच हेतु बताए गए हैं।

उन हेतुओं को अच्छे से समझने वाले कर्मफल की इच्छा का त्याग कर पाते हैं, इसीलिए श्रीभगवान विगत सूत्र में इस ओर इशारा करने के बाद, इस सूत्र में अर्जुन को उस ओर कैसे चला जाए—यह समझा रहे हैं।

यह शाश्वत सत्य है कि कर्म किसी भी रूप में किए जाएँ, जब तक हमारा इनको करते समय कर्त्ताभाव रहता है तब तक कर्मसिद्धि और कार्यसिद्धि के फलस्वरूप कर्मों का संग्रह भी होता रहता है और जब तक कर्मों का संग्रहण है, तब तक उनका परिणाम प्राप्त करने के लिए बारंबार जीवन-मरण का चक्र भी चलता रहता है।

कर्त्ता होने का अभिमान ही कर्मसंग्रह का मुख्य कारण है-इसी सिद्धांत को अच्छी तरह से समझने का इशारा भगवान कृष्ण करते हैं। इसीलिए वे अर्जुन को कहते हैं कि इस सिद्धांत को अच्छी तरह से वह समझ ले—**'निबोध मे'** अर्थात इनको तू मुझसे अच्छे से समझ ले।

यहाँ भगवान ने एक शब्द प्रयोग किया है, कहा है—**'कृतांत'**। कृतांत का अर्थ है सिद्धांत। यहाँ भगवान ने सांख्य दर्शन, सांख्य शास्त्र न कहते हुए सिद्धांत का प्रयोग किया है; क्योंकि यहाँ सांख्य दर्शन की उस धारा की चर्चा की जा रही है, जिसके माध्यम से आत्मा को कर्त्ता बनाया जाता है। उन पाँच कारणों को, उस सिद्धांत को अच्छी तरह से समझ लेने पर कर्मफल से सर्वथा के लिए संबंध विच्छेद हो जाता है। (क्रमशः)

अखण्ड ज्योति पत्रिका हेतु बैंक खातों का विवरण

जमा रसीद की प्रति एवं विवरण ई-मेल, पत्र द्वारा भेजें; अन्यथा राशि का समायोजन नहीं हो पाएगा।

Beneficiary –	Akhand Jyoti Sansthan	I.F.S. Code	Account No.
S.B.I.	Ghiya Mandi Mathura	SBIN0031010	51034880021
P.N.B.	Chowki Bagh Bahadur, Mathura	PUNB-0183800	1838002102224070
I.O.B.	Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura	IOBA0001441	144102000000006

विदेशी धन बैंक में सीधे जमा न करें, ड्राफ्ट द्वारा भेजें।

विश्वविद्यालय परिसर से –238

ऐतिहासिक शुभारंभों का केंद्र बना विश्वविद्यालय

परमवंदनीया माताजी एवं अखण्ड ज्योति शताब्दी समारोह के प्रयाज कार्यक्रमों की शृंखला के क्रम में देव संस्कृति विश्वविद्यालय में मध्यप्रदेश के ज्योति कलश यात्रा सम्मेलन का भव्य आयोजन संपन्न हुआ। इस कार्यक्रम की अध्यक्षता विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी ने की, जिनकी प्रेरक उपस्थिति ने इस आयोजन को आध्यात्मिक ऊँचाइयाँ प्रदान कीं।

इस अवसर पर माननीय जनजातीय कार्य मंत्री श्री दुर्गादास उइके जी की गरिमामयी उपस्थिति ने इस आयोजन को विशेष आयाम प्रदान किया। उन्होंने अपने संबोधन में कहा—"यदि हम अपने आदर्शों एवं मूल्यों को अपनी अगली पीढ़ी तक नहीं पहुँचा पाए तो यह हमारी विफलता होगी।

अपने अभिभाषण में उन्होंने इस बात पर भी प्रकाश डाला कि परिवार एवं समाज के बीच संतुलन आवश्यक है। यदि हम अपने परिवार पर ध्यान नहीं देंगे तो समाज को दिशा कैसे दे पाएँगे? अत: हमें अपनी पीढ़ियों को सही मार्गदर्शन प्रदान करने के लिए स्वयं और समाज की आवश्यकता है।

प्रतिकुलपति जी ने अपने संबोधन में पूज्य गुरुदेव और वंदनीया माताजी की साधना को नमन किया और कहा—"हम भाग्यशाली हैं कि पूज्य गुरुदेव-माताजी इस धरती पर आए, जिनका जीवन आज भी सभी के लिए मार्गदर्शक है। हममें से प्रत्येक को यह समझना चाहिए कि गुरुदेव-माताजी की दिव्यता के बिना हम क्या होते? उन्होंने साधारण-को-असाधारण बनाया है। हमारे जीवन की हर सफलता, हर प्रगति उनके आशीर्वाद का परिणाम है। पूज्य गुरुदेव ने साधारण को-असाधारण बनाने के लिए जो किया हमें भी आज वही करना है।"

विगत दिनों उद्यमिता विकास व बौद्धिक संपदा अधिकारों के माध्यम से मूल्य सृजनपरक सम्मेलन का आरंभ दीप प्रज्वलन के साथ हुआ। इस कार्यक्रम का उद्घाटन प्रतिकुलपति जी के द्वारा किया गया, जिन्होंने सम्मानित अतिथियों का स्वागत कर और आज के गतिशील आर्थिक परिदृश्य में बौद्धिक संपदा के महत्त्व पर अपने व्यावहारिक विचार साझा किए।

सम्मेलन में उद्योग विशेषज्ञ व नीति-निर्माता एक साथ आए, जिनमें पीएचडीसीसीआई में एमएसएमई समिति के सह-अध्यक्ष श्री डी०पी० गोयल, पीएचडीसीसीआई में सलाहकार डॉ० एच० पी० कुमार, यूनाइटेड एंड यूनाइटेड में वरिष्ठ एसोसिएट श्री सोमनाथ डे और पीएचडीसीसीआई में निदेशक सुश्री कंचन जुत्शी जी की गरिमामयी उपस्थिति रही।

प्रतिकुलपति जी ने बौद्धिक संपदा के ऐतिहासिक और दार्शनिक आयामों पर जोर दिया व इसकी राष्ट्रों को आकार देने वाली विचारधाराओं से तुलना की। उन्होंने शंकराचार्य, सूरदास, कबीर, तुलसीदास और चैतन्य महाप्रभु जैसे महान ऐतिहासिक व्यक्तियों के बीच समानताएँ प्रदर्शित कीं, जिनकी विरासत भारत की सांस्कृतिक और बौद्धिक विरासत को आकार देती है।

अपने संबोधन में प्रतिकुलपति जी ने बौद्धिक संपदा परिदृश्य में वैश्विक बदलावों के बारे में एक दिलचस्प अंतर्दृष्टि साझा की, विशेष रूप से 2008 के आर्थिक संकट पर प्रकाश डाला और बताया

कि कैसे इसने आईपी परिसंपत्तियों के मूल्यांकन में एक महत्त्वपूर्ण बदलाव को चिह्नित किया।

अपने अभिभाषण में प्रतिकुलपति जी ने न केवल वित्तीय लाभ के लिए, बल्कि मानवता की व्यापक सेवा के लिए बौद्धिक पूँजी का पोषण करने के महत्त्व पर जोर दिया। बौद्धिक संपदा पर उनके गहन शब्द श्रोताओं के साथ गहराई से जुड़े; क्योंकि उन्होंने उनसे आईपी को न केवल एक कानूनी प्रकरण के रूप में, बल्कि सामाजिक परिवर्तन और वैश्विक नेतृत्व के लिए एक प्रेरक शक्ति के रूप में सोचने का आग्रह किया।

बीते दिनों विश्वविद्यालय में 12 दिवसीय संकाय विकास प्रशिक्षण भी संपन्न हुआ। संकाय सदस्यों के लिए यह प्रशिक्षण कार्यक्रम जिसमें शैक्षणिक नवाचार, शैक्षणिक उत्कृष्टता और समग्र, मूल्य-संचालित शैक्षिक वातावरण के निर्माण पर चर्चा की गई।

प्रतिभागियों ने व्यक्त किया कि कार्यक्रम ने न केवल उनके कार्यक्षेत्र के ज्ञान को बढ़ाया, बल्कि उन्हें अपनी शिक्षणपद्धतियों में नवाचार, अनुशासन और सकारात्मक ऊर्जा लाने के लिए व्यावहारिक उपकरणों से भी सशक्त बनाया। समापन समारोह के दौरान प्रतिकुलपति जी ने अपने प्रेरक उद्बोधन में इस बात पर जोर दिया कि एक शिक्षक केवल एक सूत्रधार नहीं होता, बल्कि मूल्यों और ज्ञान का प्रकाशस्तंभ होता है। शिक्षा के स्तर को ऊपर उठाने के लिए हमें पहले खुद को ऊपर उठाना होगा, तभी हम अपने छात्रों को उनकी पूर्ण आदर्श क्षमता तक पहुँचने के लिए प्रेरित कर सकते हैं।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय में गणमान्यों के आगमन के क्रम में जर्मनी के फ्रेंकफर्ट से संसद सदस्य और डिजिटलीकरण के प्रवक्ता श्री राहुल कुमार का आगमन हुआ। प्रतिकुलपति जी ने उनका स्वागत कर उन्हें पूज्य गुरुदेव का युगसाहित्य भेंटकर सम्मानित किया।

डिजिटलीकरण, स्मार्ट सिटी पहल और सतत शहरी विकास जैसे प्रमुख विषयों पर उनसे वार्त्तालाप हुआ। श्री कुमार ने शिक्षा और मूल्यों के प्रति देव संस्कृति विश्वविद्यालय के समग्र दृष्टिकोण की प्रशंसा की तथा डिजिटलीकरण, गतिशीलता और सामुदायिक कल्याण के क्षेत्रों में भविष्य के सहयोग की संभावनाओं पर भी चर्चा की।

इसी क्रम में विगत दिनों मेम्फिस, अमेरिका के पुरुषोत्तम तंडू और अटलांटा के श्री रमेश गुडे का उनकी टीम के साथ विश्वविद्यालय आगमन एवं प्रतिकुलपति जी द्वारा उनके स्वागत का क्रम संपन्न हुआ। प्रतिकुलपति जी से हुई बातचीत में समग्र शिक्षा के मिशन को आगे बढ़ाने के लिए संभावित सहयोग के भविष्य के अवसरों की भी खोज की गई। कॉरपोरेट उद्योग के वरिष्ठ नेता श्री रमेश गुडे बहुराष्ट्रीय सॉफ्टवेयर कंपनी के संस्थापक हैं, जिसके 2,000 से अधिक कर्मचारीगण हैं।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय आगमन के क्रम में बीते दिनों मेदांता अस्पताल के ट्रांसप्लांट यूनिट के अध्यक्ष डॉ० अरविंद कुमार जी का अपनी टीम के साथ आना हुआ। इस दौरान प्रतिकुलपति जी ने उनका स्वागत-अभिनंदन किया और उन्हें पूज्य गुरुदेव का साहित्य भेंटकर सम्मानित किया एवं स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार, चिकित्सा शिक्षा में नवाचारों और योग एवं आयुर्वेद के साथ आधुनिक चिकित्सा के एकीकरण पर गहन चर्चा हुई।

विदित हो कि देव संस्कृति विश्वविद्यालय में हाल ही में 20 अंतरराष्ट्रीय प्रतिनिधियों के एक प्रतिष्ठित समूह के साथ यूनियन कॉलेज के रसायन विज्ञान विभाग, शेनेक्टैडी, एनवाई से प्रोफेसर लॉरी टायलर का आगमन हुआ। प्रतिकुलपति जी ने उनका स्वागत एवं उनसे विश्वविद्यालय के अद्वितीय शैक्षिक दर्शन के बारे में जानकारी साझा की, जो पारंपरिक मूल्यों के साथ शैक्षणिक उत्कृष्टता के मध्य सामंजस्य स्थापित करता है।

प्रतिकुलपति जी ने शिक्षा के साथ-साथ विद्या की अवधारणा भी अतिथियों के समक्ष प्रस्तुत की, जिसमें विश्वविद्यालय के समग्र मॉडल पर जोर दिया गया, जो बुद्धि और चरित्र दोनों का पोषण करता है। प्रतिनिधियों ने भी चर्चा में भाग लिया व देव संस्कृति विश्वविद्यालय की विविध सांस्कृतिक, शिक्षा और अनुसंधान में भविष्य के सहयोग के अवसरों पर संवाद किया।

अतिथियों के देव संस्कृति विश्वविद्यालय आगमन के क्रम में पिछले दिनों डिप्टी कमांडेंट श्रीमती अरुणा भारती जी 60 पुलिसकर्मियों के दल के साथ विश्वविद्यालय पधारीं, जहाँ प्रतिकुलपति जी ने उनका स्वागत किया। आगमन पश्चात दल को विश्वविद्यालय की विभिन्न गतिविधियों से अवगत कराया गया व साथ ही परिसर का भ्रमण भी करवाया गया।

इस अवसर पर पुलिसकर्मियों के मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य, योग और ध्यान के महत्त्व तथा जीवनमूल्यों के प्रति जागरूकता पर विस्तार से चर्चा हुई। श्रीमती भारती जी ने विश्वविद्यालय की शिक्षापद्धति और नैतिकता के प्रति इसके समर्पण की सराहना की और दोनों संस्थानों के बीच सहयोग के नए अवसरों पर भी विचार किया गया।

ज्ञात हो कि हाल ही में मसूरी इंटरनेशनल स्कूल की नवनियुक्त प्राचार्या श्रीमती शालिनी शर्मा जी का भी विश्वविद्यालय आगमन व प्रतिकुलपति जी से भेंट का क्रम संपन्न हुआ। प्रतिकुलपति जी से चर्चा के दौरान श्रीमती शर्मा ने बालिकाओं की शिक्षा में सशक्तीकरण और नेतृत्व विकास की आवश्यकता पर प्रकाश डाला। उन्होंने देव संस्कृति विश्वविद्यालय की शैक्षणिक दृष्टि और जीवनमूल्यों के समन्वय को भविष्य के लिए एक महत्त्वपूर्ण पहल बताया व साथ ही दोनों संस्थानों के बीच शैक्षणिक और सांस्कृतिक सहयोग की संभावनाओं पर भी चर्चा की।

विभूतियों के देव संस्कृति विश्वविद्यालय आगमन के क्रम में विगत दिनों रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम कनखल के भूतपूर्व सचिव स्वामी भावरूपानंद जी एवं वर्तमान स्वामी दयामूर्तिनंद जी का विश्वविद्यालय में आगमन हुआ, जहाँ उन्होंने प्रतिकुलपति जी से भेंट व विश्वविद्यालय के विभिन्न स्थानों का भ्रमण किया। इस क्रम में उन्हें संस्थान की शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के बारे में विस्तृत जानकारी भी प्रदान की गई।

विदित हो कि कुछ दिनों पूर्व केंद्रीय विश्वविद्यालय धर्मशाला, कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश के विद्यार्थियों का देव संस्कृति विश्वविद्यालय आगमन हुआ। 5 दिवसीय मर्म एवं प्राकृतिक चिकित्सा के प्रयोगात्मक प्रशिक्षण के अंतर्गत विश्वविद्यालय आए सभी विद्यार्थियों ने प्रतिकुलपति जी का विशेष मार्गदर्शन प्राप्त किया। इस अवसर पर प्रतिकुलपति जी ने उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना की।

विशिष्ट अतिथियों के आगमन के इसी क्रम में विगत दिनों संस्कार टीवी के सीईओ श्री मनोज त्यागी जी का भी प्रतिकुलपति जी ने देव संस्कृति विश्वविद्यालय में स्वागत किया। यात्रा के दौरान श्री त्यागी जी ने छात्रों के समग्र विकास को पोषित करते हुए भारतीय संस्कृति को संरक्षित करने के लिए विश्वविद्यालय के समर्पण की प्रशंसा की। उन्होंने परंपरा और आधुनिकता के सामंजस्यपूर्ण मिश्रण के माध्यम से भविष्यनिर्माता श्रेष्ठ व्यक्तित्वों को आकार देने में विश्वविद्यालय के प्रयासों की भी भूरि-भूरि प्रशंसा की।

बेलीज मध्य अमेरिका स्थित ओम शांति बेलीज योग और वेलनेस सेंटर की संस्थापिका मिशेल विलियम्स ने भी अपनी उपस्थिति से देव संस्कृति विश्वविद्यालय को सम्मानित किया। प्रतिकुलपति जी से उनकी मुलाकात साझा मूल्यों का संगम थी, जहाँ उन्होंने समग्र स्वास्थ्य और

सचेत कार्यशैली के माध्यम से दुनिया भर में सकारात्मक परिवर्तन के योग को प्रेरित करने वाले अभिनव तरीकों पर चर्चा की।

विदित हो कि कुछ दिनों पूर्व उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, जम्मू और कश्मीर तथा लद्दाख के क्षेत्रीय निदेशक (कौशल विकास और उद्यमिता मंत्रालय, भारत सरकार) श्री रवि चिलुकोटी ने देव संस्कृति विश्वविद्यालय का दौरा किया। अपनी यात्रा के दौरान श्री चिलुकोटी ने प्रतिकुलपति जी के साथ बैठक की।

आपसी चर्चा शिक्षा और कौशल विकास के भविष्य पर केंद्रित थी। युवा सशक्तीकरण पहलों को मजबूत करने और व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रमों को बढ़ाने के मार्गों को खोजने पर भी चर्चा हुई। श्री चिलुकोटी ने शिक्षा, नवाचार और सामाजिक प्रभाव के प्रति विश्वविद्यालय के समग्र दृष्टिकोण की सराहना की।

ज्ञात हो कि हाल ही में आयरलैंड, इटली, पोलैंड, आइसलैंड, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, स्पेन और मलयेशिया से एक प्रतिनिधिमंडल हाल ही में देव संस्कृति विश्वविद्यालय आया। प्रतिकुलपति जी ने उनका स्वागत किया। समूह ने शिक्षा, सांस्कृतिक आदान-प्रदान और वैश्विक सहयोग के पुलों के निर्माण पर बातचीत की। प्रतिनिधि विश्वविद्यालय के प्राचीन ज्ञान और आधुनिक नवाचार के अनूठे संगम को देख मंत्रमुग्ध थे।

नैदानिक प्रशिक्षण को बढ़ाने के लिए विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय और मॉडर्न ग्लोबल नर्सिंग इंस्टीट्यूट ने एक समझौता ज्ञापन के माध्यम से साझेदारी को औपचारिक रूप प्रदान किया। इस सहयोग के माध्यम से एमजीएनआई के नर्सिंग छात्रों को देव संस्कृति विश्वविद्यालय की सांस्कृतिक चिकित्सा सुविधाओं में व्यावहारिक नैदानिक अनुभव प्राप्त करने का अवसर मिलेगा।

सहयोग के अंतर्गत प्रशिक्षु एक नियुक्त नर्सिंग प्रशिक्षक के निर्देशन में कार्य करेंगे, जिसके परिणामस्वरूप गुणवत्तापूर्ण शिक्षण और व्यावहारिक अनुभव सुनिश्चित होगा। अनुबंध पर देव संस्कृति विश्वविद्यालय प्रतिकुलपति जी और एमजीएनआई के अध्यक्ष श्री जतिन कुमार शर्मा जी द्वारा हस्ताक्षर किया गया।

विदित हो कि बीते दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय ने एप्सिलॉन क्रिएटिव एजेंसी एलएलपी के साथ एक महत्त्वपूर्ण साझेदारी की। हस्ताक्षरित यह समझौता ज्ञापन 3डी प्रौद्योगिकी, कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई), संवर्द्धित और आभासी वास्तविकता (एआर/वीआर) और जनरेटिव एआई जैसे प्रमुख क्षेत्रों में अत्याधुनिक अनुसंधान और नवाचार को आगे बढ़ाने की दिशा में एक बड़ा कदम है।

समझौता ज्ञापन पर प्रतिकुलपति जी और एप्सिलॉन क्रिएटिव एजेंसी एलएलपी के सीईओ श्री नितिन कुमार ने हस्ताक्षर कर सहयोग के पक्ष को प्रगाढ़ किया। इस सहयोग के तहत दोनों संस्थानों का लक्ष्य अभूतपूर्व परियोजनाओं को बढ़ावा देना, कार्यशालाओं का आयोजन करना और ऐसी पहलों को आगे बढ़ाना है, जो डिजिटल प्रौद्योगिकी और शिक्षा के भविष्य को आकार देंगी।

ज्ञात हो कि बीते दिनों विश्वविद्यालय का दक्षिण अफ्रीका के डरबन में 11वीं राष्ट्रमंडल कराटे चैंपियनशिप में अद्वितीय प्रदर्शन रहा, जहाँ हर्ष व्यास ने सीनियर पुरुष टीम कुमाइट में स्वर्ण पदक प्राप्त किया और सुनील ने जूनियर व्यक्तिगत-55 किलोग्राम कुमाइट और जूनियर टीम कुमाइट में स्वर्णपदक प्राप्त कर विश्वविद्यालय को गौरवान्वित किया।

विजेताओं को देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी से आशीर्वाद मिला, जिन्होंने उन्हें उत्कृष्टता की अपनी यात्रा जारी रखने और भविष्य में फिर से देव संस्कृति विश्वविद्यालय को गौरवान्वित करने के लिए प्रेरित किया। ❑

परमवंदनीया माताजी की अमृतवाणी

जीवन के देवता को, आओ तनिक सँवारें

(पूर्वार्द्ध)

परमवंदनीया माताजी के उद्बोधनों में यह एक अद्भुत सामर्थ्य सन्निहित है कि जहाँ एक ओर वे साधना-पथ के किसी भी पथिक का आध्यात्मिक मार्गदर्शन करने में सक्षम हैं तो वहीं आस्थावान गायत्री परिजनों की श्रद्धा को प्रगाढ़ करने में भी समर्थ हैं। अपने एक ऐसे ही प्रस्तुत उद्बोधन में वंदनीया माताजी हर परिजन को स्मरण दिलाती हैं कि उनका पूज्य गुरुदेव एवं वंदनीया माताजी के साथ का संबंध एक जन्म का नहीं, वरन अनेकों जन्मों का है। वे बताती हैं कि पूज्य गुरुदेव ने अपनी तपश्चर्या का एक अंश लगाकर हर गायत्री परिजन को हीरे के रूप में तैयार किया है, परंतु जैसे गर्त के नीचे दब जाने पर हीरा अपनी चमक खो बैठता है, वैसे ही हम भी आत्मिक प्रकाश के अभाव में अपने जीवन-पथ से विमुख नजर आते हैं। इसीलिए वे सभी को पथ न छोड़ने को प्रेरित करती हैं। आइए हृदयंगम करते हैं उनकी अमृतवाणी को .....।

आप जानें आप हैं कौन?

गायत्री मंत्र साथ-साथ बोलें—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

हमारे आत्मीय परिजनो! क्या आपने कभी अपने बारे में विचार किया है कि आपका असली स्वरूप क्या है? अभी आपने अपने स्वरूप के बारे में नहीं जाना है। आपके स्वरूप के बारे में हमने जाना है कि आप वस्तुतः हैं कौन। आपको नहीं मालूम है कि आप कौन हैं? आपको इस जन्म के बारे में भी नहीं मालूम है कि आप किस सत्ता से जुड़े हैं और आप हैं कौन? अभी आपको मालूम नहीं है, पर हमको मालूम है।

हमें मालूम है कि आप हमारे साथ जन्म-जन्मांतरों से साथ चले आ रहे हैं और इस जन्म में भी आप हमारे साथ हैं। कितनी मेहनत और कितनी मशक्कत आपको बनाने वाले ने की है, आपने कभी अनुमान लगाया है क्या?

नहीं, आपने नहीं लगाया। हीरा हैं आप, लेकिन आपकी जो चमक है,वो धुल गई है अर्थात गर्त में दब गई है। अब खराद लगाना बाकी है और उस गर्द को निकालना बाकी है। धूल को हटाइए और खराद लगाइए। खराद लगाने वाला अभी मौजूद है। वो आपके ऊपर पॉलिश करेगा और आपको ऐसा चमचमा देगा कि बस क्या कहने का है।

बेटे, जिस किसी ने भी सच्चे मन से पल्ला पकड़ा है,उसको हमने कभी निराश नहीं होने दिया।

कभी वो निराश हुआ ही नहीं ये दावा है, सब के लिए चैलेंज है कि कोई भी लड़का या लड़की जो भी सच्चे मन से आया है- झूठे मन से नहीं बेटे, झूठ से हमको चिढ़ है, झूठ से हम अभी लाखों कोस दूर हैं।

सच्चे मन से जिसने पुकारा है तो हम दौड़ते हुए भागे हैं, चाहे हमको जान की बाजी क्यों न लगानी पड़ी हो, लेकिन उस बच्चे की मदद के लिए हम पूरी तरह आतुर हैं और वो मदद होती रहती है। मनोकामनाएँ? बेटे मनोकामनाएँ तो किसी की पूरी नहीं हुईं। आपकी पूरी हो जाएँगी? नहीं, इसमें शक है।

मनोकामनाएँ पूर्ण नहीं होतीं

यदि मनोकामना है तो इस जीवन में आपकी मनोकामना पूरी नहीं हो सकती। क्यों नहीं हो सकती? किसी की पूरी नहीं हुई तो आपकी कैसे हो जाएगी? राजा दशरथ की? राजा दशरथ की पूरी नहीं हुई। राम के बिछोह में तड़प-तड़पकर मर गए।

जबकि भगवान राम चाहते तो अपने पिता की मदद कर सकते थे और कृष्ण का अकेला भानजा अभिमन्यु था और सुभद्रा रो-रोकर कह रही थी कि भैया! तेरा एक भानजा था और तुझे ज़रा भी दया नहीं आई? अपनी बहन के ऊपर ज़रा तो दया आनी चाहिए थी। तेरी एक बहन, जिसका इकलौता बेटा समर में मारा गया और तू देखता रह गया?

उनने कहा कि बहन! हूँ तो मैं भगवान इसमें कोई शक नहीं, पर प्रारब्ध को मिटाने वाला नहीं। प्रारब्ध तो मुझे भी भोगने पड़ेंगे। मनोकामना कहाँ पूरी हुईं? बिलकुल पूरी नहीं हुईं। किसी की पूरी नहीं हुईं, आपकी भी पूरी नहीं होंगी, लेकिन हम आपको उस तरीके का बनाना चाहते हैं जो फौलादी हो और आपसे क्या कहें? बेटे! अभी मैं कह रही थी कि आप तो हीरा हैं। जिस दलदल में आप पड़े थे, आप लोगों को उस दलदल से निकालने में कितनी मेहनत की है।

हीरे हैं आप

आपको नहीं मालूम है कि गुरुजी ने कितनी तपश्चर्या का अंश आप में लगाया है और आपको जैसे मणि-माणिक्य की माला होती है, मोतियों

सेवा के अनेकों मार्ग हैं। इनमें श्रमदान, अंशदान, समयदान और ज्ञानदान प्रमुख हैं। श्रेष्ठ सत्कर्मों के लिए सामान्य जनों का श्रमदान, नवनिर्माण के प्रयोजनों-पीड़ा निवारण के सत्प्रयोजनों के लिए वरिष्ठों और समर्थों का अंशदान-साधनदान और समयदान तथा मनुष्यों की पतनोन्मुखी-अधोगामी प्रवृत्तियों को परिष्कृत करके उन्हें उत्कृष्टतावादी बनाने के लिए विभूतिवानों, प्रतिभावानों का ज्ञानदान, जिनके पास जो विभूति हो वह उसे ही उसके लिए नियोजित करते रहने का नियमित क्रम बना लें, भले ही वह न्यूनतम एवं आंशिक ही क्यों न हो तो इतना बड़ा कार्य हो सकता है कि इतिहास में उसे स्वर्णाक्षरों में लिखा जा सके।

—परमपूज्य गुरुदेव

की माला होती है, उस तरीके से आपको पिरो करके एक सूत्र में बाँध करके रखा है।

माला एक सौ आठ दाने की होती है। वो जपने के काम आती है। खंडित? नहीं खंडित

नहीं आती है। उसमें से एक दाना कम हो जाए तो? नहीं, वो जपने के योग्य नहीं रहेगी। गुरुजी ने आपको माला के रूप में पिरोया है। आप यह मत समझना कि आप कुछ नहीं हैं। आप बहुत बड़ी हस्ती हैं, लेकिन अपने बारे में आपको जानकारी नहीं है, अज्ञानता है। इसे अज्ञानता ही कह सकते हैं। जो मोह की जंजीरों में जकड़े हुए हैं उनको और क्या कहेंगे? बेचारे कहेंगे और दूसरा शब्द तो नहीं है। उनसे यही कह सकते हैं कि बेचारे हैं।

आप अपने स्वरूप को समझिए और ये समझिए कि हम इतनी बड़ी सत्ता से जुड़े हैं। बेटे गुरुजी सत्ता हैं। माताजी ये क्या कह रही हैं, सत्ता हैं? अरे सत्ता नहीं हैं तो और कौन हैं, बता। तो गुरुजी सत्ता हैं। इतनी बड़ी शक्ति हैं कि आपसे जितनी तारीफ की जाए, जितना उनके बारे में कहा जाए, उतना ही थोड़ा होगा और उनके साथ जुड़ने पर भी आप ऐसे-के-ऐसे ही रहे, तो बेटे आने वाला वक्त हमको भी धिक्कारेगा और आपको भी धिक्कारेगा। आपको धिक्कारेगा कि ऐसी महान आत्मा के साथ जुड़ करके भी गंदे, गलीज-के-गलीज ही रह गए।

महान बनिए आप

यह क्या हुआ? ज़रा भी इनके ऊपर उस महानता का असर नहीं पड़ा। थोड़ा-बहुत असर पड़ा होता तो आप में से प्रत्येक साहस के साथ निकल करके आया होता कि हम हैं। राम की सहायता करने के लिए नल, नील, हनुमान, जामवंत जाने कितने-कितने खड़े हो गए थे। कौन? बंदर। उनकी क्या औकात थी? कोई औकात नहीं थी। राम चाहते तो लंका पर विजय पा सकते थे और पाई भी, लेकिन श्रेय उनको दिया। किनको? बंदर-भालुओं को।

जो सच्चे मन से जुड़ गए थे और उन्होंने कहा कि जब तक हम सीता माता को वापस नहीं लाएँगे तब तक हमको चैन नहीं है, हम चैन की नींद नहीं सो सकते। हमारी माँ का अपहरण हो गया है और हम चैन से सोएँगे? नहीं, हमारे लिए धिक्कार है।

जो हमारे आराध्य देव हैं, जिनको हम आराध्य कहते हैं। जिनके अंतर में ज्वाला जैसी धधक रही हो और चट्टान पर कोई असर न हो। चट्टान पर कहीं पेड़ उगते देखे हैं? नहीं, उस पर कभी नहीं उगते। क्यों नहीं उगते? इसलिए नहीं उगते कि उसने वो भूमि बनाई ही नहीं है। वो तो चट्टान है। उस पर जो पानी पड़ता है, सो ढलता हुआ चला जाता है। चट्टान जैसा हृदय, पाषाण जैसा हृदय, उसके लिए क्या कहेंगे? बेटे, बंदर, भालू सब खड़े हो गए।

उन्होंने कहा नहीं हमको सीता को वापस लाना ही है और सारे-के-सारे बंदर, भालू, रीछ जो भी थे, सब खड़े हो गए। श्रेय किनको मिला? हनुमान को। कौन हो गए हनुमान? हनुमान बेटे भक्तों में अग्रणी हो गए।

बेटे, आपको मालूम है कि कृष्ण ने अर्जुन का रथ चलाया था और हम भी दावा करते हैं कि आपके जीवनरथ को हम चलाएँगे। आपके पिता-माता दोनों आपके जीवन के रथ के दो पहिये हैं। आप यह मानकर चलना कि हम आपके जीवन के रथ के दो पहिये हैं, हम आपको किनारे से लगाएँगे, आप डूब नहीं सकते। कहीं विलग नहीं हो सकते।

गुरुदेव माताजी का वायदा

हम आपको किनारे से लगाएँगे, ये हमारा वायदा है। हम डूबेंगे तो आप डूबेंगे, हम नहीं डूबेंगे तो आपको भी नहीं डूबने देंगे। आप स्वयं ही डूबेंगे तो फिर हम क्या कर सकते हैं? फिर हम कुछ नहीं

कर सकते हैं। आप डूबेंगे तो फिर हम चिल्लाएँगे कि अरे! हमारा बेटा कहाँ चला गया? अरे कहाँ खो गया? अरे वो किधर चला गया? अरे वो तो मझधार में डूब गया।

हमने कभी बहुत सोचा था और यह कहा था कि इसको तो हमको बचाना है। उँगली भी पकड़ी, हाथ भी पकड़ा, झकझोरा भी, सब कुछ किया, लेकिन निरर्थक चला गया। निरर्थक क्यों चला गया? इसलिए चला गया कि उसके ऊपर कोई असर नहीं हुआ था। बेटे! आप मत जाने देना। जैसा कि लड़के अभी कह रहे थे कि हमको थामे रहना। बेटे! हम सच्चे हृदय से कहते हैं कि हम आपको थामे रहेंगे।

यह वायदा है। आप चाहे जब देखना, सोते-जागते हर समय आपके साथ-साथ उँगली पकड़ करके जैसे एक माँ बच्चे को घुमाती है, चलाती है, बेटे इसी तरीके से हम आपकी उँगली पकड़ेंगे और कहेंगे बेटा चल, हम तेरे साथ हैं, तू क्यों घबराता है।

संस्कृति की सीता को कौन बचाएगा?

संस्कृति की सीता को लाने में क्या आप पीछे रह जाएँगे? आपको पीछे नहीं रहना चाहिए। आपको वही स्वरूप याद करना चाहिए, जो कि भगवान राम के समय पर अनेकों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया था। जिसमें गिलहरी भी शामिल थी, जिसमें शबरी भी शामिल थी। पढ़े-लिखे? नहीं बेटे, भावनाएँ अलग हैं और शिक्षा अलग है।

शिक्षा के लिए तो हम क्या कहें? शिक्षा तो आजकल जाने कहाँ की मारी हमें कहाँ ले जा रही है? भावनाविहीन, पाषाण हृदय, जिनके अंदर कुछ भी चहल-पहल नहीं है। ये तो बिलकुल निर्जीव हैं। बिना पढ़ी-लिखी थी, कौन? शबरी। उसने कहा कि यह भगवान राम का रास्ता है, मैं अपने राम का रास्ता साफ करूँगी। मैं कैसे चैन से रह सकती हूँ।

बेटे आपको वही समय याद करना पड़ेगा, भगवान राम के समय का और भारतीय संस्कृति की सीता को वापस लाने के लिए आपकी वही भूमिका होनी चाहिए, जो कि नल और नील एवं जामवंत और हनुमान की थी। बिलकुल वही आपको भूमिका अदा करनी है।

बेटे, समय निकल जाएगा, हो सकता है और होगा भी, न मानो तो आप अलग हो करके देख लीजिए। असली हों तो हमारे साथ जुड़े रहना और

शुची वो हव्या मरुतः शुचीनां
शुचिं हिनोम्यध्वरं शुचिभ्यः।
ऋतेन सत्यमृतसाप आयञ्छुचिजन्मानः
शुचयः पावकाः॥

—ऋग्वेद-7/56/12

अर्थात हे वीर मरुतो! आप पवित्र अन्न से पुष्ट हैं एवं पवित्र जीवन जीने वाले हैं। आप के लिए ही हम यज्ञ करते हैं; क्योंकि आप सत्य के व्यवहार से सत्यमय जीवन जीकर दूसरों को भी श्रेष्ठ बनाते हैं।

जो नकली चेहरे हों सो बेटे कृपा करके अपने-अपने घर वापस चले जाना। हम हाथ जोड़ते हैं।

इनमें से हमारे जो दो, पाँच, दस होंगे, तो हम सीना ठोककर कहेंगे कि ये हमारे हैं। थोड़े से ही सही, पाँच ही सही, दस ही सही, जो कुछ हैं सो मुबारक हैं, पर हम यह तो कहेंगे कि ये हमारे हैं।

अभी तो हमें यही विश्वास नहीं है कि हमारे कौन-से हैं? हमारे वो हैं, जो हमारे सिद्धांतों के लिए और विचारों के लिए कटिबद्ध हैं, वो हैं

हमारे। वो हमारे नहीं हैं बेटे, जो यह कहते हैं कि नहीं माताजी हम तो पैर धोकर ही ले जाएँगे। हमने कहा न बेटा ला उलटे हम तेरे पैर धोते हैं। हमारे पैर कोई मत धोओ, हमें नहीं धुलवाने पैर। हमें पैरों पर ज़रा भी विश्वास नहीं है कि पैर धो करके आपका कुछ भला हो सकेगा।

भटकिए नहीं, मार्ग पर रहिए

हमें बिलकुल कतई विश्वास नहीं है, क्योंकि वो आस्थाओं से ताल्लुक रखता है, वो विश्वास से ताल्लुक रखता है। आपका तो कोई विश्वास ही नहीं है, कोई आस्था ही नहीं है, कोई निष्ठा ही नहीं है। डाल-डाल और पात-पात, आज यहाँ, कल वहाँ, जाने कहाँ-कहाँ भटक रहे हैं। यह भटकाव नहीं होना चाहिए।

बेटे, अब आप सही रास्ते पर आइए, आपसे बहुत कुछ उम्मीद है, पर वो उम्मीद पूरी तभी होती है, जब आपका समर्पण भाव हो। जब तक समर्पण भाव नहीं है, तब तक व्यक्ति दो कौड़ी का है, उसका कोई मूल्य नहीं, कोई औकात नहीं है। समर्पण क्या चीज़ होती है? बेटे समर्पण वो चीज़ होती है कि एक गंदा नाला होता है, आपसे यह कहें कि आप नाले में से पानी भर लाइए और उसका आचमन करिए, आप करेंगे? अरे माताजी! यह क्या कह रही हैं? इसमें तो टट्टी-पेशाब जाता है और हम इसमें से आचमन करें, यह आप क्या कह रही हैं? बावली तो नहीं हो गईं?

हाँ बेटा, ठीक कह रहा है, उसमें से नहीं लिया जा सकता और गंगा में से गंगाजल लिया जा सकता है और वो नाला जो गंगा जी में जा रहा है, उसका क्या हुआ? बेटे, यह तो गंदा नाला था? अरे माताजी! गंदा नाला तो था, लेकिन यह नाला गंगा में समर्पित हो गया, गंगा में मिल गया और गंगा में मिल करके वो एकाकार हो गया। जब एकाकार हो गया तो कहाँ रहा वो नाला? वो तो गंगा हो गया।

समर्पण का मूल्य

जब ईंधन आग के लिए समर्पित हो जाता है, तो उसका जो स्वरूप पहले था वो नहीं रहता। वो तो आग की लपटों के रूप में हो जाता है, क्योंकि वो आग में समर्पित हो गया। जो आग में समर्पित हो गया तो वो आग का रूप हो गया है। यह समर्पण है और एक समर्पण वो है पति और पत्नी का। न करे भगवान किसी का पति चला जाए, जल्दी मर जाए, तो उसकी पत्नी सारी-की-सारी दौलत की स्वामिनी हो जाती है। वेश्या होगी? कतई नहीं हो सकती, क्योंकि वो वेश्या है, उसमें स्वार्थ है और पत्नी? बेटे, अपना जी निछावर कर देगी; क्योंकि उसका समर्पण है। समर्पण है इसलिए वो सारी-की-सारी संपत्ति की अधिकारिणी हो जाती है। कौन? पत्नी। और वेश्या नहीं होती। बिलकुल हूबहू यही संबंध भगवान और भक्त, गुरु और शिष्य के बीच में होता है।

आपको मैं एक कहानी सुनाती हूँ। कहाँ बात तो कह रही हूँ इतनी गंभीर और वो है ज़रा हँसी की। एक सेठ और सेठानी थे। सेठानी जो थी वो रोज कहती थी कि अरे तूने इतना कमाया, पर कभी तेरे मन में यह भी आया कि किसी को गुरु ही बना ले? उसने कहा कि तू ही गुरु बना ले, मैं किसी को गुरु-वुरु नहीं बनाता। बहुत दिन हो गए, रोज कहती थी कि देख आत्मपरिष्कार के लिए किसी के साथ जुड़ना बहुत जरूरी है।

विवेक का तो ध्यान रखो, अविवेकी तो मत बनो। विवेक यदि यह कहता है कि सही है तो जरूर करना चाहिए, पर वो सुनता ही नहीं था। एक रोज न मालूम उसे क्या सूझ आई; क्योंकि रोज जब

नाप-तौल करता था तो कभी बेटे की कसम खाता था, कभी अपनी पत्नी की कसम खाता था।

एक दिन आया सो गले में कंठा बाँध करके आया और सेठानी से बोला कि अरी सेठानी! मैं तो आज दीक्षा ले आया हूँ, गुरु बनाकर आया हूँ। तुम गुरु बनाओगे? तुमसे तो गुरु लाख कोस दूर है, तुम क्या जानते हो गुरु के बारे में? अरी पगली तू नहीं जानती। क्या? देख जब मैं दुकान पर बैठता हूँ तो बेटे की कसम खाता हूँ तो मुझे यह लगता है कि मेरा बेटा मर गया तो मेरी संपत्ति का क्या होगा? मेरा पिंडदान कौन करेगा? और जब मैं तेरी कसम खाता हूँ तो मुझे यह लगता है कि मेरी गृहस्थी बरबाद हो गई।

तू मर जाएगी तो मेरा दांपत्य जीवन कैसे चलेगा? वो खटाई में पड़ जाएगा। तो फिर क्या करते हो? जब कोई ग्राहक आता है तो यह कहता हूँ कि देख भाई मैं इसकी कसम खाता हूँ। मैं गुरु की कसम खाता हूँ। मैंने इसमें मिलावट नहीं की, पूरा तौलता हूँ। अब बेचारा जो कोई आता विश्वास करता कि भाई वास्तव में यह अब गुरु की कसम खा रहा है, तो सही करता होगा। उसने इसे अपना कर्म बना लिया। मैं तो यही विचार करती कि तूने जो गुरु बनाया है, वह इसके लिए बनाया है कि जो ग्राहक आवे वो उसी को चूना लगाता जा।

आत्मपरिष्कार के लिए भी कुछ करें

बेटे, यहाँ भी ऐसे ही पाला पड़ गया, धन-दौलत और बेटा-बेटी। बेटे तेरे आत्मपरिष्कार के लिए भी हमें कुछ करना है क्या? हमें कुछ नहीं चाहिए। तुझे विवेकी बनावें, तेरी बुद्धि में तीव्रता लावें, ताकि कुछ समाज की सेवा करे, कुछ राष्ट्र के काम आए। जिस राष्ट्र में हमने जन्म लिया है, उसके लिए भी कुछ करना है। नहीं साहब! उससे हमें क्या लेना-देना है? हमारी तो बीबी है और बच्चा है, इससे ज्यादा और हमें क्या चाहिए?

बेटे, अभी जो मैंने दीक्षा की बात बताई, मैं आपकी आस्था को नहीं डिगाना चाहती हूँ, पर सौ में से अस्सी फीसदी जिन्हें आग है। आपको बुरा लगे तो लग जाए, लगेगा तो क्या करेंगे? आप तो हमारे बच्चे हैं। लग जाएगा तो देखा जाएगा, वैसे भी तो माँ डाँटती है, फटकारती है, आप यही समझ लेना। हमारे अंदर में जो आग जल रही है, इसके लिए कोई नहीं आता, जो यह कहता हो कि

शरीर ने आत्मा से कहा—"देखो! मैं कितना सुंदर, आकर्षक व बलवान हूँ।" आत्मा बोली—"तुम अपनी अपेक्षा मुझे अधिक सुंदर, आकर्षक बना दो तो तुम्हारे क्षणिक गुण मेरे पास आकर शाश्वत हो जाएँगे।" शरीर ने बात सुनकर भी अनसुनी कर दी। देखते-देखते जीवन समाप्त हो गया। शरीर रोगी व कृशकाय हो गया। मृत्यु की घड़ी में आत्मा बोली—"तुमने मुझे कुरूप तथा निर्बल रहने दिया। तुमने आत्मतत्त्व को विकसित करने में शक्ति लगाई होती तो मेरे साथ तुम्हारा भी कल्याण हो गया होता।" पर अब बहुत देर हो चुकी थी। मनुष्य जन्म-जन्मांतरों से यही भूल दोहराता चला आ रहा है।

हम भी आपकी आग में हिस्सेदार हैं, हमको बनाइए, आपके सुपुर्द हैं। एक व्यक्ति भी हमको ऐसा मिल जाता तो हम धन्य हो जाते बेटे।

गांधी जी को एक विनोबा भावे मिल गए और गांधी जी भी धन्य हो गए और विनोबा भावे भी धन्य हो गए; क्योंकि विनोबा भावे गांधी जी से जुड़ गए और गांधी जी से जुड़ गए तो वे दूसरे संत हो गए और गांधी जी के मुकाबले के हो गए। कौन? विनोबा भावे हो गए। भूदान के लिए उन्होंने कितना काम किया? बड़ा जबरदस्त काम किया है। शिष्य तो ऐसे होते हैं।

बेटे, अभी मैंने आपसे निवेदन किया है और मैं आपको किन-किन के नाम बताऊँ। मैंने कल-परसों ही आपको शिवाजी के बारे में निवेदन किया था, चंद्रगुप्त के बारे में निवेदन किया था कि चंद्रगुप्त नाचीज, एक जरा-सा लड़का था और वो जुड़ गया तो कहाँ-से-कहाँ उसको पहुँचा दिया।

विवेकानंद, जो कि नौकरी माँगने के लिए गए थे, लेकिन गुरु ने देखा कि लड़के के अंदर वो बीज है, वो तत्त्व है कि इसको निखारा जा सके। उन्होंने कहा कि बेटे, तू नौकरी माँगने आया है? मैं तो तुझसे कुछ और काम लेने वाला था। यह तू क्या बला लेकर आया।

नौकरी तो मैं भी नहीं करता, तुझे कहाँ से दिलवा दूँ? न मुझे तो दिलवा ही दो। उनने कहा कि मैं तो नहीं दिलवा सकता, जा काली माँ के पास जा और जब काली माँ के पास गए तो ऊपर से नीचे देख करके हक्का-बक्का हो गए। फिर आए अपने गुरु के पास।

उनने कहा—"गुरुजी कुछ नहीं चाहिए, मुझे केवल आपकी शक्ति चाहिए।" उन्होंने कहा—"बेटे ले तू शक्ति।" जिनके पास शक्तियाँ हैं, वो शक्ति देने के लिए व्याकुल हैं, पर हो तो सही कोई। आते तो वो रावण हैं, भस्मासुर हैं, जो खुद का सर्वनाश कर जाएँ और दूसरे का भी बंटाढार कर दें। अगर कहीं सच्चे भगीरथ मिल जाएँ तब? तब क्या कहने का।

भक्तों में अग्रणी बनें

ऐसे अनेकों हुए हैं जो भक्तों में अग्रणी हैं, जिनको कि हम सही भक्त कह सकते हैं। राम-लक्ष्मण मिल जाएँ तो? आ हा... फिर क्या कहने की। फिर तो विश्वामित्र के यज्ञ की रखवाली हो जाएगी और जो काम वो कराना चाहते थे, वह काम भी हो जाएगा।

बेटे, हम भी वही चाहते हैं। जहाँ आपका स्वार्थ है, वहीं हमारा भी स्वार्थ है। हमारे स्वार्थ को आप समझ नहीं पाए हैं। आप इतना समझ गए होते कि शायद मिशन को हमारी कोई जरूरत है, पैसे की आवश्यकता है तो मजा आ जाता। हाँ बेटे, वो भी आवश्यकता है। उसके लिए भी नहीं नकारा जा सकता है। इतनी बड़ी बिल्डिंग है और इतना खरचा हम लेकर बैठे हैं, तो पैसे से ही चलेगा, लेकिन देख पैसे से ज्यादा तेरी वो निष्ठा और तेरी वो श्रद्धा हमको चाहिए।

हमको तेरा पैसा नहीं चाहिए, ले जा अपने पैसे को। हमें तो तेरी श्रद्धा चाहिए और हम जो कह रहे थे कि हमको चाहिए दाहिना हाथ। दाहिना हाथ बनेगा कि बायाँ हाथ बनेगा? बन! तू कौन-सा बनता है? जो भी बनता है हमको मंजूर है। दाहिना हाथ बनेगा?

नकली नहीं, असली बनिए

हम बहुत खुशनसीब हैं। चल बायाँ ही बन जा, वो भी हमको मंजूर है। बेटे, पर आप सही रहना, असली रहना, नकली से हमको चिढ़ है,आप नकलीपन सामने मत लाना। नकली चेहरे से हमको कुछ एलर्जी हो गई है। आप असली रूप में सामने

आना। आप असली रूप में सामने आएँगे तो फिर देखिए कि आपको हम क्या-क्या बनाते हैं। बेटे मैं समझती हूँ कि आपको अपने कलाकार के प्रति थोड़ी-सी विश्वास की कमी है।

आपको यदि यह विश्वास हो जाए कि यह कलाकार ऐसी बढ़िया मूर्ति गढ़ता है कि बस, आनंद आ जाता है। जाने कितने तो लेखक पैदा कर देता है, जाने कितने गायक पैदा कर देता है, जाने कितने वक्ता पैदा कर देता है और न मालूम उसकी जी की तड़पन है कोई संत तो बन जाए, बस, संत ही नहीं बनता। संत बनाने की चाहत है हमको कि कोई ऐसा भी हो कि जो संत बनकर दिखाए, जो हमारे पदचिह्नों पर चल करके दिखाए कि हाँ हम आपके साथ हैं, देखिए हम संत बनते हैं।

विनोबा भावे तो संत बन गए थे, लेकिन आप अभी संत नहीं बने। हम चाहते हैं कि आप में से उठ करके आएँ और संत-परंपरा को जिंदा रखें, ब्राह्मणत्व को जिंदा रखें। अभी ब्राह्मणत्व को जिंदा नहीं रखा गया है। ब्राह्मणत्व क्या होता है? ब्राह्मणत्व वो होता है, जो अपने लिए कम और दूसरों के तयीं ज्यादा, दूसरों के लिए ज्यादा कार्य करता है।

हमारे देश में गरीबी से लेकर के, दहेज से लेकर के और जाने क्या-क्या कुरीतियाँ फैली हुई हैं। उनके निवारण के लिए हमने कोई कदम उठाया क्या? उठाया है तो आप सही हैं और नहीं उठाया है तो अब उठाइए। जहाँ कहीं विकृतियाँ हैं, आप चुनौती दीजिए, साहस से खड़े हो जाइए। नहीं मैं-मैं करके रह जाते हैं। अजी क्या करें? माताजी! हम तो वहाँ गए थे, तो हमारा साहस नहीं पड़ा। बेटा तेरा साहस क्यों नहीं पड़ा? माताजी! इतने विरोधी थे कि हिम्मत नहीं पड़ी।

कौन विरोधी था? अरे वो हमारे बगल में जो बैठा था। अच्छा, बड़ा जबरदस्त मोटा हट्टा-कट्टा होगा? और तुम कितने थे? अरे माताजी! हम तो कोई सौ थे, पचास थे, पर हम तो उस बगल वाले से डर गए।

बेटे, ये तेरी क्षुद्रता है कि गुंडे के आगे हम सर झुका गए। क्यों? गुंडे का मुकाबला नहीं करेंगे? एक घूँसा मारेंगे तो उसकी लीद निकाल देंगे। तो क्या होता? कुछ नहीं होता। साहस के साथ में आपको आना पड़ेगा। जो भी अपने समाज के सुधार के लिए आपको करना है तो पहले अपने आपके चिंतन की सफाई करनी पड़ेगी, अपने आप की सफाई करिए। दिल की, दिमाग की, भावनाओं की आप सफाई करिए। इस लायक आप बन जाइए।

[क्रमशः अगले अंक में समापन]

चींटों की बस्ती में कहीं से एक गुबरैला पहुँच गया। उसका रूप-रंग चींटों को बड़ा अद्भुत लगा तो अनजाने में ही वह उनके सम्मान का पात्र बन गया। थोड़े दिनों में ही वह उनका राजा बन बैठा। इस सब से उसका अहंकार बहुत बढ़ गया।

एक दिन उनकी बस्ती में एक हाथी गुजरा। उसे देख गुबरैला चिल्लाया—"ए हाथी! तेरा इतना दुस्साहस कि तू हमारे राज्य से हमें बिना सम्मान दिए निकले।"

हाथी मुस्कराया और बोला—"जी महाराज! मैं अभी आपकी शान में झुककर सलाम करता हूँ।" हाथी के झुकते ही गुबरैला और चींटे उसके पैर तले कुचलकर मर गए। अहंकारी की प्रगति जितनी तीव्र होती है, उसका पतन उससे भी तेज होता है।

साधना शताब्दी—विशिष्ट लेखमाला

जीवन की वापसी के लिए, अंतरिक्ष का प्रकाश

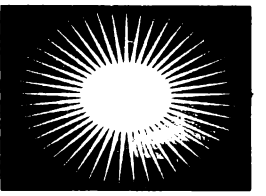

जीवन की वापसी अंतरिक्ष से अवतरित होने वाले प्रकाश व प्राण से संभव हो सकेगी। अभी इन प्रकाश व प्राणकेंद्रों पर असुरों की आधीनता व आधिपत्य है। वर्तमान स्थिति तक असुरों का ही अंतरिक्ष पर वर्चस्व बना हुआ है, लेकिन अब आगे ऐसा रहने वाला नहीं है। असुरों की समयावधि अब समाप्त हो रही है। शतवर्षीय साधना का अंतिम चरण उन पर वज्राघात बनकर टूटने वाला है। असुरों, आसुरी वृत्तियों, आसुरी शक्तियों एवं आसुरी अँधियारे पर इस महातप के परिणाम—इंद्र के वज्र, विष्णु के चक्र, शिव के त्रिशूल की तरह अमोघ व अचूक प्रहार करेंगे। राम के अमोघ बाण एवं श्रीकृष्ण के सुदर्शन चक्र की तरह इन पर विघातक प्रहार करके इनके अस्तित्व व प्रभाव को छिन्न-भिन्न व ध्वस्त-ध्वंस कर देंगे। यह नियति का अकाट्य विधान एवं समय की सुनिश्चित भवितव्यता है।

विश्व-कुंडलिनी जागरण की सक्रियता का प्रथम चरण अब समाप्त होने को है। इक्कीसवीं सदी के पहले पच्चीस वर्षों में जो विष प्रकट होना था, जो विषाक्तता उफननी थी—वह हो चुकी। अब इसके शमन व समापन का समय है। विश्व-कुंडलिनी जागरण और इसके प्रभावों का सत्य युगऋषि परमपूज्य गुरुदेव ने अखण्ड ज्योति पत्रिका के जनवरी, 1987 ई० के विशेषांक '**कुंडलिनी जागरण अंक**' में विस्तार से लिखा था। इसी विशेष अंक का एक लेख है—**'राष्ट्र कुंडलिनी की परिवर्तन-प्रक्रिया'**। इसमें गुरुदेव ने इसके सच को विस्तार से, किंतु सारगर्भित शब्दों में समझाया है।

उनके शब्द हैं—'विगत तीन वर्षों में शांतिकुंज में सामयिक परिस्थितियों को देखते हुए जो विशिष्ट साधना चली है, उसे विश्व का अथवा राष्ट्र का कुंडलिनी जागरण कह सकते हैं। अग्नि का तेजस् उसके निकट क्षेत्र में अधिक होता है। उसके उपरांत जैसे-जैसे दूरी बढ़ती है, वैसे ही उसकी ऊष्मा कम होती जाती है। इसी प्रकार हिमालय की पुरातन ऋषि-ऊर्जा का पुनर्जागरण, हरिद्वार के सप्तधारा क्षेत्र में नियोजित हुआ है। उसका प्रभाव राष्ट्र में समीपता की दृष्टि से अधिक और जल्दी दृष्टिगोचर होगा। दूरी बढ़ते जाने से विश्व के अन्य क्षेत्रों में उसका प्रभाव क्रमशः परिलक्षित होता जाएगा।

'अरुणोदय का प्रकाश सर्वप्रथम पानी में दृष्टिगोचर होता है। उसकी झलक आरंभ में पर्वतों की चोटियों और वृक्षों की ऊपर वाली टहनी-फुनगियों पर दिखाई पड़ने लगती है। उसके बाद वह प्रकाश क्रमशः अधिक व्यापक होता जाता है। समूचे आकाश में फैलता है और पर्वत-शिखरों से नीचे उतरकर सारी जमीन पर फैल जाता है। ठीक उसी प्रकार महाप्रज्ञा की जो इन तीन वर्षों में कुंडलिनी जाग्रत हुई है, उसकी ऊर्जा का उदयन प्रथमतः इस देश में होगा। पीछे क्रमशः वह समस्त विश्व में फैलता जाएगा। उसके प्रभाव से होता हुआ परिवर्तन विभिन्न रूपों में दृष्टिगोचर होगा।'

युगऋषि द्वारा उच्चारित इस शब्द मंत्र के विस्तार को सार-संक्षेप में 'जीवन की वापसी' कहा और समझा जा सकता है। अभी और पिछले कुछ वर्षों की स्थिति पर विचार करें, तो जीवन के हर आयाम पर महासंकट छाया हुआ है।

जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र-परिक्षेत्र नहीं है, जो महाविष की विषैली मूर्च्छा से ग्रस्त-त्रस्त न हो। जीवन मरणासन्न होकर महामृत्यु की ओर बढ़ रहा है। धरती-आसमान, पर्वत-नदियाँ-समुद्र, वृक्ष-वनस्पति, पशु-पक्षी, जीव-जंतु, सभी संकट में हैं। अगर मनुष्यों की बात की जाए तो खान-पान, रहन-सहन, संबंधों का पारस्परिक ताना-बाना; सभी विपदा में पड़े हैं। जीवन-व्यवस्था के सभी रूप-रंग व ढंग विकृत हो चले हैं।

अभी तो स्थिति यही है कि असुर विजय अभियान पर निकले श्रीराम और उनके सैन्यदल में जीवनरूपी लक्ष्मण पर वीरघातिनी शक्ति के प्रभाव से आई मूर्च्छा से शोक-संताप और हाहाकार मचा हुआ है। जबकि वीरघातिनी का प्रहार करने वाला मेघनाद, उसके साथी असुर व नायक रावण सभी अट्टहास कर रहे हैं। वे अपनी भावी विजय को लेकर, जीवन की मृत्यु को लेकर, जीवन चेतनारूपी लक्ष्मण की महामृत्यु को लेकर आश्वस्त और विश्वस्त हैं, लेकिन तब की श्रीराम कथा में महावीर हनुमान कालनेमि के कुचक्र को तोड़कर संजीवनी औषधि लाकर, मृत्यु के निवारण-निराकरण में जीवन की वापसी करने में सफल रहे थे। तब मृत्यु तो अवश्य हुई थी; पर मेघनाद, उसके साथी असुरों व उनके नायक रावण की।

अब की श्रीराम कथा में भी यही होगा। शिव के हिमालय से ऋषि-साधना की संजीवनी प्रकाश लाकर जीवन की वापसी का महाबली-महावीर का महाप्रयास अब सफल होने को है। जीवन अपनी बहुआयामी व्यापकता में मूर्च्छित अवश्य है, परंतु उसका मरण न होगा। समय-अवधि बीतने से पहले उसकी मूर्च्छा टूटेगी। वह फिर से सबल-समर्थ व सक्षम होगा। वह अपने प्रचंड पराक्रम से असुरों के महामरण को संभव बनाएगा। अनर्थ तब भी घटित नहीं हुआ था, अनर्थ अब भी घटित नहीं होगा। जीवन की वापसी पर तब भी श्रीराम की जय-जयकार का गगनभेदी उद्घोष-जयघोष हुआ था। अब भी जीवन की वापसी पर प्रभु श्रीराम का गगनभेदी जयघोष सुनाई देगा।

वर्तमान के दुःख को भविष्य के सुख में परिवर्तित करने के बारे में परमपूज्य गुरुदेव इस 'कुंडलिनी जागरण अंक' में लिखते हैं—'इस

शतवर्षीय साधना का अंतिम चरण उन पर वज्राघात बनकर टूटने वाला है। असुरों, आसुरी वृत्तियों, आसुरी शक्तियों एवं आसुरी अँधियारे पर इस महातप के परिणाम—इंद्र के वज्र, विष्णु के चक्र, शिव के त्रिशूल की तरह अमोघ व अचूक प्रहार करेंगे। राम के अमोघ बाण एवं श्रीकृष्ण के सुदर्शन चक्र की तरह इन पर विघातक प्रहार करके इनके अस्तित्व व प्रभाव को छिन्न-भिन्न व ध्वस्त-ध्वंस कर देंगे। यह नियति का अकाट्य विधान एवं समय की सुनिश्चित भवितव्यता है।

उलटे को उलटकर सीधा करने के लिए बड़ी, बहुत बड़ी शक्ति चाहिए—सो भी मानवीय नहीं दैवी। इसे किस प्रकार जाग्रत और एकत्रित किया जाए? उसे धरती-निवासियों के पीछे किस प्रकार लगाया जाए? यह एक बहुत बड़ा काम है। सबसे बड़ी समस्या समर्थों की दिशा मोड़ने की है। चाहे धनवान हों, चाहे शासक, चाहे साहित्यकार हों, चाहे धर्माध्यक्ष— सभी उलटे मार्ग पर चल रहे हैं। लोक-मंगल की बात तो करते हैं, पर सभी को अपने स्वार्थ

साधन की पड़ी है। इस समुदाय की अपनी क्षमता- ध्वंस से मुड़कर सृजन में, स्वार्थ से विरत होकर परमार्थरत हो सके; तो शालीनता का वातावरण बनने में कुछ देर न लगे। अध्यात्म विज्ञान के अनुसार उपचार मात्र एक ही रह जाता है—कठोरतम् तपश्चर्या।'

कुंडलिनी जागरण अंक के पृष्ठ 56-57 पर लिखे गए इन शब्दों में गुरुदेव की दृष्टि-दृष्टिकोण के साथ उनके महासंकल्प का प्रकटीकरण है। वही महासंकल्प जो वर्ष—1926 ई० से वर्ष 2026 ई० तक अविराम, अविरत व अबाधित चलता रहा। जिसकी गति-गंतव्य, मति-मंतव्य, दिशा, दशा, लक्ष्य सब कुछ एक ही रहा है—'**जीवन की वापसी**'। उन्हें अपनी तप-सामर्थ्य पर अटल-अडिग विश्वास था। उन्होंने इस क्रम में आगे लिखा—'जब इस शक्ति को साधना द्वारा ब्रह्मांडव्यापी बनाया जाता है, तो असंख्यों की मन:स्थिति को उलट-पुलटकर कुछ-का-कुछ बना देती है। वह युग बदल सकती है, विश्वामित्र की तरह एक नई सृष्टि रच सकती है।'

यही है असंभव को संभव बना देने वाला उनका तप-पुरुषार्थ, जो वर्ष, 2026 ई० में अपने सौ वर्ष पूरे कर लेगा। इसके परिणाम में जीवन की वापसी केवल संभावना नहीं, बल्कि समय की सुनिश्चतता बनकर प्रकट होगी। यह भविष्य की भवितव्यता बनकर साकार होगी। यह खुली आँखों से देखा जाने वाला सच होगा। तब जीवन का स्वरूप-संरचना, जीने की विधियाँ, जीने के संसाधन, सभी के प्रत्येक घटक एवं इकाई में समाया हुआ विष समाप्त होगा। महातप की संजीवनी क्षमता इन्हें पुन: जीवन प्रदान करेगी। संभव है इस संभावना पर किसी को भरोसा न हो, भविष्य की इस भवितव्यता पर किसी को यकीन न आए, पर सत्य यही है। समय का, नियति का, ईश्वर का निर्धारण यही है। विधि का विधान यही है।

रात घनी-अँधेरी होने पर, उस समय जब आकाश पर मेघ छाए होते हैं, जब न चंद्रमा होता है और न तारे, कहीं कोई जुगनू भी चमकता हुआ नहीं दिखता—तब प्रात: का सूर्योदय, सुबह की धूप, दिन का उजियारा सबका सब अविश्वसनीय लगता है, लेकिन अचानक जब हवाएँ मेघों को

जीवन अपनी बहुआयामी व्यापकता में मूर्च्छित अवश्य है, परंतु उसका मरण न होगा। समय-अवधि बीतने से पहले उसकी मूर्च्छा टूटेगी। वह फिर से सबल-समर्थ व सक्षम होगा। वह अपने प्रचंड पराक्रम से असुरों के महामरण को संभव बनाएगा। अनर्थ तब भी घटित नहीं हुआ था, अनर्थ अब भी घटित नहीं होगा।

तितर-बितर कर देती हैं, तब आकाश में तारों के दीप जलने-झिलमिलाने लगते हैं। फिर कहीं किसी कोने से छिपा हुआ चंद्रमा भी आकाश में चमकने लगता है। इसके कुछ ही देर बाद रात ढलती है। अँधेरा छँटता है और पूरब की दिशा में लालिमा छाने-छिटकने लगती है। सूर्योदय, सुबह की धूप और दिन का उजियार-कल्पना, विश्वास से अनेकों कदम बढ़कर धरती का सच बन जाता है। जीवन की वापसी का सत्य भी कुछ ऐसा ही है—जिसे घटित होना है, जो घटित होगा, जो अवश्य ही घटित होकर रहेगा। तब मनुष्य की आकृति तो वही रहेगी, लेकिन उसकी प्रकृति पूर्णतया परिवर्तित हो जाएगी। ❑

अपनों से अपनी बात

विचारक्रांति का अनिवार्य आध्यात्मिक अनुबंध-उपासना

जन्मशताब्दी की इस वेला में यह पूरा वर्ष हम सभी परिवारजनों के लिए, प्रत्येक गायत्री परिजन और श्रद्धावान के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। हमारी संस्कृति में यह पुनीत परंपरा है कि जब भी कोई पर्व, त्योहार, उत्सव आदि का आयोजन होता है तो दो प्रक्रियाएँ लगभग सभी घरों में अपनाई जाती हैं।

एक तो पूर्व तैयारी के फलस्वरूप साफ-सफाई, झाड़-बुहार कर समस्त कूड़ा-करकट और अनावश्यक चीजें बाहर कर दी जाती हैं। शेष जो उपयुक्त है, उसे भी रँगाई-पुताई-सफाई कर सुव्यवस्थित कर लिया जाता है। दूसरी आयोजन से संबंधित सामान-सामग्री एकत्रित कर ली जाती है।

इन दोनों ही प्रक्रियाओं को मुख्य आयोजन से पूर्व संपन्न कर लिया जाता है। ध्यान देने वाली बात यह है कि इन सारे पुरुषार्थ के पीछे की प्रेरणा, लक्ष्य और संकल्प, एक ही होता है और वह है आयोजन को सार्थक रूप से मनाना। जब आयोजन सफलतापूर्वक संपन्न हो जाता है तो उसके आनंद, खुशी, प्रसन्नता भरे एहसास संपूर्ण जीवन में नवचेतना, नवजीवन, नई ऊर्जा का बहुमूल्य उपहार दे जाते हैं।

उक्त के संदर्भ में तीन चीजें समझने योग्य हैं—पहली है लक्ष्य की सुनिश्चितता अर्थात किसी पर्व आदि आयोजन का होना, दूसरी है लक्ष्य पूरा करने की प्रेरणा और संकल्प का होना और तीसरी है इस निमित्त नियोजित होने वाला हमारा प्रयास-पुरुषार्थ। तीनों मिलकर ही लक्ष्य की सार्थकता, साध्य की सिद्धि को पूर्ण कर पाते हैं।

ध्यान से देखें तो इन्हीं तीन आयामों में हमारे भी इस विश्वव्यापी संगठन का स्वरूप विनिर्मित है। हमारा एकमात्र लक्ष्य है युग-परिवर्तन का। पूज्य गुरुदेव ने इसे ईश्वरीय योजना, महाकाल की इच्छा कहा है और इसी निमित्त युगनिर्माण-योजना का सूत्रपात किया है। इस लक्ष्य को पूरा करने की प्रेरणा और संकल्प ऋषिसत्ताओं का है। ऋषिसत्ता का तप, ऊर्जा संरक्षण और प्रेरणा इस महान लक्ष्य के साथ संबद्ध है तथा इसमें पुरुषार्थ जुड़ा है सत्पुरुषों का, सज्जनों-भावनाशीलों का।

यही तीन आधार हैं—हमारे विश्वव्यापी विराट संगठन के। ईश्वर की योजना, ऋषियों का संरक्षण और भावनाशील परिजनों का परिश्रम-पुरुषार्थ—यही तो अखिल विश्व गायत्री परिवार का स्वरूप है। ईश्वरीय शक्ति और ऋषिसत्ताओं का संरक्षण इस महान लक्ष्य के लिए अपनी तरह से प्रवाहमान है। हम परिजनों के हिस्से में जो उत्तरदायित्व है, वह है—पुरुषार्थ करने का।

पुरुषार्थ का तात्पर्य है सच्चिंतन और सदाचरण को स्वयं और अन्यों के जीवन में प्रतिष्ठित करना। हमारे लिए पुरुषार्थ-परिश्रम का क्षेत्र बाहर नहीं, जीवन के भीतर है। परिष्कार, परिवर्तन और निर्माण करने की कर्मभूमि जीवन के भीतर है। परिष्कार चिंतन का, परिवर्तन हृदय का और निर्माण सच्चरित्र का—यही सबसे बड़ा युगीन पुरुषार्थ है।

इसी की माँग, इस युग को है, पूज्य गुरुदेव का काम यही है और युग-परिवर्तन का मानदंड भी यही है। परिवर्तन और परिष्कार मानवीय अंतराल का ही होना है, बाहर का कुछ नहीं बदलना।

सद्ज्ञान, सच्चिंतन, सद्विवेकरूपी गायत्री की उपासना कर जीवन-दृष्टि में उसकी प्रतिष्ठा करनी है, ताकि सत्कर्म, सदाचरण, कर्त्तव्य-परायणतारूपी यज्ञीय दर्शन को जीवनशैली में समाहित करना है—यही युग निर्माण, युग-परिवर्तन का मर्म है। यही धरती पर गायत्री और यज्ञ की प्रतिष्ठा का प्रयोजन और हम सबके पुरुषार्थ का मार्ग है।

हम अपने कर्त्तव्य-पथ से जरा भी न भटकें, अपने पुरुषार्थ से जरा भी न चूकें, इसके लिए हमारे गुरु ने हम सभी का पहले से ही मार्ग प्रशस्त कर रखा है। आवश्यकता है उस पर चलने, डटे रहने और लक्ष्य की डोर थामे रहने की। मार्ग के विषय में तो सभी सुपरिचित हैं। वही मार्ग जिसे आरंभ से सुनते, पढ़ते, कहते, सुनाते, अपनाते एवं सिखाते आ रहे हैं अर्थात उपासना, साधना और आराधना का।

उपासना से कारणशरीर का परिष्कार और संवर्द्धन होता है, साधना से सूक्ष्मशरीर का और आराधना से भौतिक जगत् के कल्याण का पुरुषार्थ सिद्ध होता है। संवेदना, सद्ज्ञान और सत्कर्म—यह तीनों ही इस गुरु निर्दिष्ट मार्ग की फलश्रुति हैं। दृश्य जगत् में इन्हीं का क्रियान्वयन सद्भाव, सच्चिंतन और सत्प्रवृत्तियों के रूप में दिखाई देता है।

पूज्यवर ने हमें अपने हिस्से के पुरुषार्थ को पूरा करने का मार्ग दिया है, उसकी शुरुआत उपासना से होती है। इसके पीछे का मर्म बड़ा गहन-सूक्ष्म, परंतु सुस्पष्ट है। वस्तुतः उपासना का संबंध हमारे कारणशरीर से, हमारी आत्मसत्ता से है। यह हमारे अस्तित्व का केंद्र भी है।

भाव-संवेदना की गंगोत्तरी का यही उद्गम-स्थल है। श्रद्धा, प्रेम, समर्पण, भक्ति-भावना का यही आश्रयस्थल है, इसलिए गुरुदेव ने सर्वप्रथम इसी केंद्र को अपने इस महान लक्ष्य की यात्रा का पहला सोपान बनाया है।

विचारक्रांति की आधारभूमि भी यही है। ऋषियों के विचार अंतरात्मारूपी इसी केंद्र से निस्सृत हो शाश्वत मंत्र बने हैं। अतः उपासना से अंतरात्मा की जाग्रति, भाव-संवेदना की प्रगाढ़ता, अंतःकरण की शुद्धि—यही हमारे मार्ग का पहला एवं अनिवार्य पड़ाव है। जो विचार-चिंतन अस्तित्व के जिस धरातल से उपजता है, उसकी पहुँच एवं प्रभाव भी उसी स्तर का होता है।

यदि विचार केवल बौद्धिक है, कल्पनाप्रसूत है तो वह सिर्फ औरों के मस्तिष्क तक ही पहुँचेगा, लेकिन विचार अथवा चिंतन का केंद्र हृदय है, अंतरात्मा से प्रकट संवेदना है तो ऐसा विचार सामने वाले के हृदय में पहुँचता है। हृदय-परिवर्तन करा देने वाले विचारों की पृष्ठभूमि सदैव मानवीय अंतःकरण ही रहा है।

हृदय की संवेदना से, आत्मसत्ता के धरातल से उत्पन्न विचारों की सिर्फ और सिर्फ एक ही दिशा-एक ही लक्ष्य-एक ही परिणति है—वह है व्यष्टि और समष्टि का कल्याण। व्यापक, स्थायी और समग्र रूपांतरण करने की सामर्थ्य केवल आत्मसंवेदना से उत्पन्न विचारों में होती है। बौद्धिक एवं कल्पनात्मक स्तर के विचार तो केवल बाह्य जीवन एवं जगत् में कुतूहल मात्र उत्पन्न कर सकते हैं, जीवन-अस्तित्व की गहराई में पहुँचकर अंतःपरिवर्तन को संभव कर देने वाली सामर्थ्य उनमें कदापि नहीं होती।

यदि सामर्थ्य होती तो यह आधुनिक दुनिया इस तरह हृदयशून्यता, मूल्यहीनता और संवेदनहीनता जैसी असह्य पीड़ा से कराह नहीं रही होती। हमारे गुरुदेव ने अपनी दिव्यदृष्टि से मानवता की इस दयनीय स्थिति को पहले ही देख लिया था, इसलिए उन्होंने समस्या के समाधान की दिशा में विश्व समाज को 'विचारक्रांति' का मार्ग दिखाया, किंतु उनके विचार बौद्धिक नहीं, अपितु पूर्णरूपेण

आध्यात्मिक और उनकी हृदयभूमि पर पीड़ित मानवता के उत्थान के लिए संवेदित अंतरात्मा की आवाज हैं।

इन्हें समझने और आत्मसात् करने के लिए भी अंत:करण की सद्भावनायुक्त स्थिति आवश्यक है। ऐसी स्थिति को प्राप्त करने और निरंतर बनाए रखने की आंतरिक योग्यता प्रदान करने का जो सर्वोत्तम साधन है—उसी का नाम है उपासना।

यह जीवन में 'विचारक्रांति' को घटित करने का पहला अनिवार्य आध्यात्मिक अनुबंध है। इसके अभाव में पूज्य गुरुदेव के विचार भी केवल मानसिक जिज्ञासाओं की तुष्टि और विविध आयामों की जानकारी रखने वाला एक बौद्धिक अभ्यास मात्र बनकर रह जाते हैं।

हममें से कोई भी अपना ऐसी विडंबना का शिकार हो पिछड़ न जाए, इसका भी हम सभी को सावधानी से आपस में ध्यान रखना आवश्यक है। अब चूँकि वर्तमान की चुनौतियाँ और जिम्मेदारियाँ—दोनों ही दृष्टि से आगामी समय महत्त्वपूर्ण और कसौटीपूर्ण है। चहुँओर विषमताओं-विसंगतियों ने दुनिया में बाहर-भीतर से घोर अशांति, उपद्रव और विनाश का वीभत्स वातावरण खड़ा कर दिया है।

ऐसे में हमें भी अपने अभियान को और ज्यादा तीव्र और प्रखर करने की आवश्यकता है। समय की माँग है कि चुनौती बड़ी हो, परिस्थितियाँ विषम हों, अंधकार ज्यादा घना हो; पुरुषार्थ भी उसी स्तर का संपन्न किया जाए और प्रकाश की लौ भी तीव्र कर ली जाए। जिम्मेदारी के इसी संदेश को लेकर यह शताब्दी वर्ष का सुअवसर आया है।

अभी विचारक्रांति के सूत्रों को लेकर सघन रूप से बहुआयामी गतिविधियाँ संचालित की जा रही हैं। शृंखलाबद्ध यज्ञ-आयोजन, रथयात्रा, प्रशिक्षण कार्यक्रम, सामूहिक साधना-अनुष्ठान जैसी अनेकानेक सृजनकारी प्रवृत्तियों को विगत वर्ष से और ज्यादा सक्रिय और व्यापक बनाने में लगी हम सब की भागीदारी पर सुनिश्चित ही हमारी इष्ट सत्ता गर्व कर रही होगी, परंतु दुनिया के इस दृश्य मंथन-प्रक्रिया के समानांतर ही हमें अदृश्य भीतरी मंथन-प्रक्रिया को भी बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है।

जरा-सी कमी, थोड़ी-सी कोर-कसर कहीं हमारे युगीन पुरुषार्थ और सौभाग्य को कलंकित न कर दे, इसके लिए भीतर का मंथन भी जरूरी है। पूज्य गुरुदेव की बताई कसौटियों के प्रति कहीं कोई लापरवाही तो नहीं हो रही है, उपासना के

सत्संग से उत्थान और कुसंग से पतन की पृष्ठभूमि बनती है। यह और कुछ नहीं, किसी समर्थ की प्रतिभा का, भले-बुरे स्तर का स्थानांतरण ही है। *—परमपूज्य गुरुदेव*

धागे कहीं ढीले तो नहीं पड़ गए हैं? स्वयं से पूछें, आत्मसमीक्षा से स्वयं के अंत:करण में झाँकें, देखें कि कहीं किसी कोने में ईर्ष्या, द्वेष, अहं, इच्छा, आवेग, मान-सम्मान, पद-प्रतिष्ठा आदि के जाले तो नहीं चिपक गए हैं? हृदय की संवेदना, समर्पण और श्रद्धा की त्रिवेणी में दुर्भावनाओं के बुलबुले तो नहीं घुल-मिल रहे हैं?

आत्ममंथन का यही समय है। कूड़ा-करकट की झाड़-बुहार, उपयोगी तत्त्वों की सुव्यवस्था और आगत के लिए सुपात्र होने की तैयारी का यही सर्वोत्तम अवसर है। स्वयं के जीवन की रीति-नीति को सम्यक बनाकर, आदर्शरूपी मानदंडों की कसौटी पर कसकर ही लक्ष्य की सुनिश्चितता, शिष्यत्व की सार्थकता और जीवन की धन्यता को प्राप्त कर सकते हैं। ❑

युगऋषि विश्वामित्र

एक कहानी उपजी है, मानस के अंतर मन में रे।
कर चिंतन फिर जाती हूँ, मैं पिछले कल में रे॥
गुरु वसिष्ठ की कामधेनु ने, ज्ञान जगाया पल में रे।
वामदेव के ज्ञान से कौशिक, आए ऋषि दल में रे॥

युग से उपजे प्रश्नों से, एक ऋषि की परिभाषा में।
कलम उठाई चल पड़ी, कुछ उत्तर की आशा में॥
कल के सारे पन्ने खोजे, मैंने फिर अभिलाषा में।
युगों-युगों में तुमको खोजा, अपनी ज्ञान पिपासा में॥

गुरु शिखर पर रहे विराजित, सदा रहे सब दासा रे।
हर युग को पहचान दिलाई, समझी हमने भाषा रे॥
कर परीक्षा हरिश्चंद्र की, सत का भान कराया रे।
युग ही सतयुग कहलाया, प्रथम वही है आया रे॥

फिर युग त्रेता में मैं आती हूँ, तेरा भान कराती हूँ।
त्याग-तपस्या की गाथा में, वो आभास कराती हूँ॥
कई निशाचर मरवाकर, अहिल्या उद्धार कराते हो।
सीता स्वयंवर करवाने, तुम राम जनकपुर लाते हो॥

आगे द्वापर में आई रे, तब भी तुझको पाई रे।
तेरी तपस्या आगे मेनका, उतर स्वर्ग से आई रे॥
और शकुंतला गाथा से, देखो भरत को पाई रे।
पड़ा नाम था भारत का, तब भरतवंश हर्षाई रे॥

अब कलयुग क्यों छूटा है, गुरु कहाँ पर रूठा है।
चार युगों के अंतिम खंड में, सब्र हमारा टूटा है॥
क्या वसुधा को भूल गए, क्यों यह रहे अछूता है।
हो कहीं अब भी विराजित, अंकुर हृदय में फूटा है॥

—रेखा सक्सेना

युगव्यास वेदमूर्ति तपोनिष्ठ

पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य

के

समग्र वाङ्मय का क्रमिक परिचय

खंड – 4

साधना पद्धतियों का ज्ञान और विज्ञान

योगदर्शन एक विशुद्ध विज्ञान है । पतंजलि ऋषि ने योगविज्ञान के आठ अंग बताए हैं । इस साधना-विज्ञान के सभी पक्षों पर विस्तार से इस खंड में विवेचन हुआ है।

इसमें समझाया गया है–

- योग क्या है ?
- योग का स्वरूप और उद्देश्य।
- सामान्य जीवन में योग का महत्त्व क्या है ?
- यम और नियम क्या हैं ? अष्टांग योग।
- पातंजलि योगदर्शन क्या है ?
- योग-साधना के चमत्कारी परिणाम ।

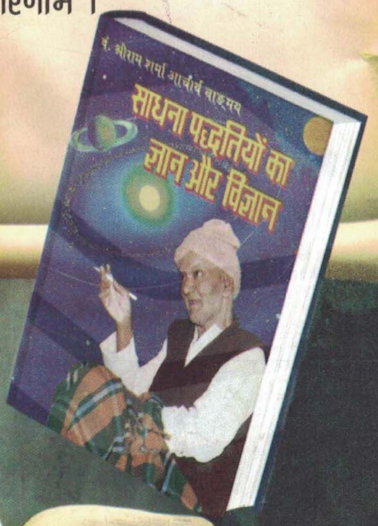

अखण्ड ज्योति
(मासिक)
R.N.I. No. 2162/52

www.awgp.org

प्र. ति. 01 / 03 / 2025
Regd. No. Mathura — 025/2024-2026
Licensed to Post without Prepayment
No. : Agra/WPP — 08/2024-2026

राष्ट्रीय कन्या कौशल शिविरों की श्रृंखला युगतीर्थ शांतिकुंज में आयोजित

38वाँ राष्ट्रीय खेल महोत्सव, उत्तराखंड
प्रायः 2200 गायत्री परिजनों द्वारा समवेत शंख ध्वनि के साथ आयोजन का शुभारंभ

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक-मृत्युंजय शर्मा द्वारा जनजागरण प्रेस, बिरला मंदिर के सामने, जयसिंहपुरा, मथुरा से मुद्रित व अखण्ड ज्योति संस्थान, बिरला मंदिर के सामने, मथुरा-वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा–281003 से प्रकाशित। संपादक–डॉ. प्रणव पण्ड्या।
दूरभाष — 0565–2403940, 2972449, 2412272, 2412273 **मोबाइल** — 09927086291, 07534812036, 07534812037, 07534812038, 07534812039
ई-मेल–akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org